

देखी सुनी

वर्ष 2015, अंक 33

उजड़ने में कुछ पल लगते हैं पर बसने में सदियां लग जाती हैं—नेपाल.
जासदी में अपना साथ व सहयोग बनायें रखें।

प्रिय साथियों!

इस बार के अंक में शामिल है— भीड़ के न्याय का औचित्य, महिला सुरक्षा व सशक्तिकरण, विभिन्न सरकारी योजनाएं व घोषणाएं, घरेलू श्रम की अनदेखी, सब्सिडी प्रणाली व शौचालय सुविधा में सुधार की राह व धारा 66ए की विदाई।

अपने अनुभव, प्रतिक्रियायें व सुझाव अवश्य साँझा करें!

नीतू रौतेला
जागोरी सन्दर्भ समूह

“

हमें खुद को समझाना होगा कि तमाम हताशा के बावजूद भीड़ का न्याय कभी भी न्यायिक प्रणाली का विकल्प नहीं हो सकता, क्योंकि अगर ऐसा हो गया, तो यह न सिर्फ हमारे लोकतंत्र को खोखला करेगा, बल्कि हमारे संस्थागत ढाँचों को भी नुकसान पहुंचाएगा। ”

इस उन्माद को रोकना होगा

न गालैंड के दीमापुर ने हमें डराना बदस्तूर जारी रखा है। विगत पांच मार्च को लोगों के एक हुजूम ने, जिसमें स्कूल और कॉलेज के विद्यार्थी भी शामिल थे, नगालैंड की दीमापुर सेंट्रल जेल पर धावा बोल दिया। उस जुनूनी भीड़ ने बलात्कार के एक आरोपी को जेल से जबरन बाहर निकाला और उसकी कमर पर रस्सी बांधकर उसे सात किलोमीटर तक घसीटा। इस दौरान उसे लातों से पीटा गया और इतने पत्थर बरसाए गए, कि उसके प्राण निकल गए। फिर एक घड़ी वाले टावर पर लटका कर उसके मृत शरीर का प्रदर्शन किया गया। फिर क्या था, घटना की वीभत्स तस्वीरें इंटरनेट के जरिये चारों ओर फैल गईं। घटना की



पत्रलेखा चटर्जी

विकास संबंधी मुद्दों पर लिखने वाली वरिष्ठ स्तम्भकार

गुथी अब तक सुलझ नहीं पाई है। दीमापुर में जो कुछ हुआ, उससे मीडिया की मुख्यधारा में एक बार फिर पूर्वोत्तर की हिंसा और निराशा से लबरेज वही घिसी-पिटी तस्वीर अफसोसनाक ढंग से सामने आई है। मगर सबसे ज्यादा भयावह यह तथ्य है कि दीमापुर में हुई बर्बरता किसी मायने में केवल नगालैंड की समस्या नहीं

है, और न ही यह देश में भीड़ द्वारा न्याय की पहली घटना है। दीमापुर में दिखाई गई बेरहमी की भयावहता से हम उबर भी नहीं पाए थे कि आगरा में लड़कियों से छेड़छाड़ के मामले में एक व्यक्ति भीड़ के हथ्ये चढ़ गया और मारा गया। एक प्रत्यक्षदर्शी के मुताबिक लोगों ने इस व्यक्ति को घर से खींच कर निकाला और तब तक बुरी तरह पीटते रहे, जब तक कि वह मर नहीं गया। उत्तर प्रदेश में भी भीड़ के न्याय की यह कोई पहली वारदात नहीं थी। 2010 में मुरादाबाद जिले में 26 वर्ष का असलम भी इसी तरह भीड़ का शिकार बना था। उस पर पानी के पाइप चुराने का आरोप था। इसी वजह से जिला अदालत के परिसर में ही उसकी पिटाई, और फिर मौत हुई। हैरानी तो इस बात की है कि यह सब जिला मजिस्ट्रेट के कार्यालय से महज कुछ सौ मीटर की दूरी पर हुआ।

उत्तर प्रदेश की तरह दूसरे राज्यों में भी इसी तरह की घटनाएं सामने आ चुकी हैं। पिछले वर्ष राजस्थान के गंगानगर जिले में



सरोकार

जनसमूह ने अपने ढंग का न्याय करते हुए एक शख्स को नपुंसक बना दिया। इस व्यक्ति ने एक नाबालिग लड़की के साथ बलात्कार की कोशिश की थी। उस व्यक्ति को खींचते हुए कसाई की दुकान पर लाया गया और मांस काटने वाली छुरी से उसे नपुंसक बना दिया गया। एक प्रत्यक्षदर्शी का इसे जायज ठहराते हुए यह तर्क था कि हालिया समय में देश में महिलाओं के खिलाफ हुए अपराध सहनशीलता की सीमा लांघ चुके हैं, और इन्हें रोकने का बस यही एक तरीका था। ऐसे अनगिनत उदाहरण हैं, जब सार्वजनिक नाराजगी ने न्याय को इस ढंग से हाथ में लिया हो। आलम यह है कि बहुत से लोग भीड़ द्वारा किए जा रहे इस न्याय को जायज ठहरा रहे हैं। इनका मानना है कि अपराध लगातार बढ़ते जा रहे हैं, न्याय प्रणाली पहले से ही बोझ से लदी हुई है और समय पर न्याय मिलना तो सपने सरीखा बना हुआ है; इसलिए अब कोई भी विकल्प शेष नहीं बचा है।

आंकड़े जो कहानी बयां कर रहे हैं, वह वाकई भयावह हैं। 2009 में देश में खासकर महिलाओं के खिलाफ 2,03,804 अपराध हुए। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार 2013 में यह आंकड़ा बढ़कर 3,09,546 पर पहुंच गया। दूसरी ओर, अदालतें

पहले ही मुकदमों के भारी बोझ तले दबी हुई हैं। अकेले उच्चतम न्यायालय में तकरीबन 63,800 मुकदमे लंबित हैं, जबकि उच्च न्यायालयों में यह आंकड़ा 44 लाख पर पहुंचा हुआ है। जिला और निचली अदालतों में लंबित केसों की संख्या तो और ज्यादा है।

यह सोच सुविधाजनक हो सकती है, पर सच नहीं है, कि केवल अशिक्षित और गरीब लोग ही भीड़ के न्याय का हिस्सा बनते हैं। तथ्य कुछ और ही कहानी कहते हैं। दीमापुर में कानून को ताक पर रखते हुए न्याय करने पर तुली उन्मादी भीड़ में स्कूल और कॉलेज के बच्चे भी शामिल थे। ऐसी भीड़ से सहानुभूति रखने वालों में इंदौर से भाजपा की विधायक ऊषा ठाकुर भी शामिल हैं, जो नगालैंड में गुस्साई भीड़ के हाथों बलात्कार के आरोपी के मारे जाने में कुछ भी गलत नहीं मानतीं। निस्संदेह देश भर में बलात्कार और यौन हिंसा की बढ़ती घटनाओं से देश का मध्यवर्ग खासा व्यथित है। मगर यह मानना खतरनाक होगा कि महिलाओं के खिलाफ अपराध या दूसरे अपराधों को भीड़ के न्याय द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। इससे पहले कि हालात काबू से बाहर हो जाएं, यह ध्यान रखना होगा कि बलात्कार या बिगड़ती कानून-व्यवस्था के खिलाफ चलाए जा रहे किसी भी अभियान को भीड़ के इस उन्माद का भी विरोध करना चाहिए। इसके साथ ही हमें पुलिस के लिए बेहतर प्रशिक्षण और आधुनिक हथियारों की उपलब्धता के अलावा न्यायाधीशों व अदालतों की संख्या में बढ़ोतरी पर भी ध्यान देना होगा, ताकि कानून के शासन पर लोगों का भरोसा बरकरार रखा जा सके। इसके अलावा, जैसा कि लखनऊ के एक संगठन 'एसोसिएशन फॉर एडवोकेसी ऐंड लीगल इनीशिएटिव' (एएएलआई) से जुड़ी वकील शुभांगी सिंह लिखती हैं कि समुदायों को अपने अधिकारों, देश के कानून और प्राथमिकी (एफआईआर) दर्ज कराने जैसी सामान्य बातों के प्रति जागरूक बनाना भी एक बड़ी चुनौती है।

दीमापुर से यह भयानक सबक मिलता है कि जब उन्मादी जन-समूह कानूनी प्रक्रियाओं का मखौल उड़ाते हुए अपराधी को सजा देने का काम खुद अपने हाथ में लेता है, तो क्या होता है। देश की पुलिस बेशक बेहतर ढंग से प्रशिक्षित न हो, और उसके पास काम का बोझ भी ज्यादा हो, बहुत से मामलों में हमारा आपराधिक न्यायिक तंत्र न्याय प्रदान करने में नाकामयाब रहा हो, मगर हमें खुद को समझाना होगा कि तमाम हताशा के बावजूद भीड़ का न्याय कभी भी न्यायिक प्रणाली का विकल्प नहीं हो सकता, क्योंकि अगर ऐसा हो गया, तो यह न सिर्फ हमारे लोकतंत्र को खोखला करेगा, बल्कि हमारे संस्थागत ढाँचों को भी नुकसान पहुंचाएगा।

मुद्दा

पार्थ उपाध्याय

रि छले दिनों सर्वोच्च न्यायालय ने पुलिस सुधार संबंधी एक याचिका की सुनवाई के दौरान टिप्पणी की कि अपराधों के मामले में पुलिस को इतनी सक्रियता और निष्पक्षता दिखानी चाहिए कि सीबीआई जांच की मांग ही न उठे। दरअसल संगीन अपराध के हर तीसरे मामले में पीड़ित पक्ष द्वारा सीबीआई जांच की मांग की जाने लगती है। सवाल सिर्फ पुलिस अन्वेषण में निष्पक्षता तक सीमित नहीं है। पुलिस व्यवस्था में व्याप्त खामियों की लंबी सूची है जिसका प्रभाव न सिर्फ आम जनता और पीड़ित पक्ष पर पड़ता है बल्कि पुलिस तंत्र की दक्षता और निष्पादन में भी हास हो रहा है। सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणी उसकी नाराजगी व्यक्त करती है। आठ वर्ष से अधिक समय बीतने के बावजूद राज्य पुलिस सुधार संबंधी न्यायालय के विस्तृत निर्देश लागू नहीं कर सके हैं। 1996 में उत्तर प्रदेश के पूर्व डीजीपी प्रकाश सिंह और एक अन्य डीजीपी एनके सिंह ने सर्वोच्च न्यायालय में पुलिस सुधार के लिए याचिका दायर की थी जिसके निर्णय में न्यायालय ने केंद्र व राज्यों को सात निर्देशिकाएं जारी की थीं। न्यायालय ने पुलिस तंत्र में सुधारों की दो स्तर पर अपेक्षा की थी- पहला पुलिस की कार्यप्रणाली से सम्बंधित और दूसरा जवाबदेही संबंधी। जिसमें राज्य सुरक्षा आयोग, पुलिस स्थापना बोर्ड और पुलिस शिकायत प्राधिकरण की स्थापना, पुलिस महानिदेशक की नियुक्ति प्रक्रिया में पारदर्शिता और अन्वेषण पुलिस और सुरक्षा पुलिस में वर्गीकरण जैसे निर्देश जारी किये गए थे। लेकिन इनके कार्यान्वयन में राज्यों के लचर रवैये पर न्यायालय शुरू से चिंता व्यक्त करते रहे हैं।

न्यायालय की चिंता जायज है कि देश की कानून व्यवस्था का जिम्मा संभालने वाली पुलिस खुद अनियमिततायों से घिरी है। किसी भी राज्य ने अब तक न्यायालय के सभी निर्देश लागू नहीं किये हैं। 30 में से 16 राज्यों ने ही नया पुलिस अधिनियम पारित किया है। उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु पंजाब ने पुलिस शिकायत प्राधिकरण की स्थापना तक नहीं की है। राज्यों ने राज्य स्तर पर ही पीसीए गठित की है, जबकि जिला स्तर पर भी शिकायत प्राधिकरण स्थापित करने के निर्देश थे। सवाल है कि चाहे पुलिस सुधार का मामला हो या नौकरशाहों के नियत कार्यकाल का,

मुद्दा

कुमुदिनी पति

ता हिलाओं की सुरक्षा का प्रश्न सरकार और समाज के लिए महत्वपूर्ण प्रश्न है। वर्ष 2015 के लिए भी यह अहम राजनीतिक प्रश्न बना रहेगा। इसे सकारात्मक ही कहा जाएगा कि निर्भया कांड से आरंभ हुए आंदोलन ने देश-विदेश में महिला आजादी और सुरक्षा के सवाल को फोकस में ला दिया है। यही वजह है कि महिला व बाल विकास मंत्री मेनका गांधी को जहां एक ओर महिलाओं के लिए विशेष यातायात सुविधा को पेशकश करनी पड़ रही है, वहीं बढ़ते बाल अपराध के मद्देनजर जुविनाइल जस्टिस ऐक्ट में संशोधन कर 16 व अधिक उम्र के व्यक्ति को 'जुविनाइल' की परिभाषा से बाहर लाने और जुविनाइल जस्टिस बोर्ड द्वारा अलग से विचार की सिफारिश करनी पड़ी है। मंत्रिमंडल द्वारा पारित यह प्रस्ताव संसद में पेश हुआ और देश में 'रेप क्राइसिस केंद्रों' का प्रस्ताव भी पारित हुआ। यद्यपि प्रस्ताव के तहत बलात्कार पीड़िता को तात्कालिक राहत के लिए प्रत्येक जिले में 'रेप क्राइसिस केंद्र' का अलग से निर्माण होना था, पर इसमें जिच रह गया है। अब मंत्रालय को जिले में ऐसे अस्पताल की तलाश करनी होगी जिसमें जरूरी अधिसंरचनात्मक ढांचा उपलब्ध हो सकेगा ताकि 'रेप क्राइसिस सेल' बनाए जा सके। हाल में एक डॉक्टर पर तेजाबी हमले के दौरान पता चला कि अधिकतर जिलों में बर्न सेंटरों का नितांत अभाव है। मंत्रालय के समक्ष चुनौती है कि ऐसिड ऐटैक सर्वाइवर्स को चिकित्सीय, मनोवैज्ञानिक व आर्थिक सहायता देने के लिए क्या कुछ किया जा सकेगा?

सरकार की ओर से प्रस्ताव आया है कि राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990 में संशोधन कर आयोग को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के समान सिविल कोर्ट के बराबर हक दिये जाएं। इसके तहत महिला आयोग के समन पर पुलिस अथवा जांच एजेंसी को निश्चित अवधि में जांच पूरी कर आयोग को रिपोर्ट देनी होगी और किसी प्रकार की लापरवाही दंडनीय होगी। साथ ही आयोग के अध्यक्ष के रूप में सर्वोच्च या उच्च न्यायालय के अवकाशप्राप्त जज या को नियुक्त किया जा सकेगा। सवाल है कि नियुक्ति की प्रक्रिया को कैसे राजनीति से अलग किया जाए ताकि आयोग की स्वायत्तता सुनिश्चित हो सके। महिला व बाल विकास मंत्रालय पुलिस महकमे को लैंगिक अपराधों के प्रति संवेदीकृत करने हेतु पुलिस थानों में 33 प्रतिशत महिला पुलिस की नियुक्ति की बात कर रहा है पर देखना है कि

सरकार सक्रियता और रुचि क्यों नहीं दिखाती? क्यों न्यायालय को ही हर बार कार्यपालिका की कार्यप्रणाली पर चिंता जतानी पड़ती है? पुलिस की संवेदनशीलता, प्रक्रिया में पारदर्शिता और पुलिस तंत्र की खुद की समस्याएं व्यापक जनहित का मुद्दा है और पुलिस सुधार एक श्रृंखला सुधार प्रक्रिया है जिसका संबंध जेल सुधार और न्यायिक सुधार से भी है। जेलों में बंद कई ऐसे विचाराधीन कैदी हैं जिन्हें वकील उपलब्ध नहीं है इसका जिम्मा भी पुलिस का है। पुलिस कभी रुचि नहीं दिखाती कि आरोपी को उसके विधिक अधिकार बताये जाएं।

देश में पुलिस की कार्यप्रणाली, वर्किंग ऑवर, प्रशिक्षण एवं इंफ्रास्ट्रक्चर से सम्बंधित तमाम सुधार की आवश्यकता है। नई सरकार बदलाव के स्तर पर खासी तेजी दिखा रही है देश में निवेश का माहौल बनाने में सबसे बड़ी बाधा तो कानून व्यवस्था ही है। यूपी और बिहार का निवेश में पिछड़ा होने का बहुत बड़ा कारण वहां लचर कानून व्यवस्था है। संसाधन, प्रशिक्षण और मानवाधिकारों के प्रति



संवेदनशीलता के मामले में हमारी पुलिस विकसित देशों की पुलिस के सामने कहीं नहीं ठहरती। पुलिस की निष्पक्षता से अन्वेषण कर पाने में दो व्यावहारिक समस्याएं आती हैं पहला तो यह समझना होगा कि अपराधों के स्वरूप और अपराधियों की मोडस ओपेरेंडी पहले की अपेक्षा बदल चुकी है। अपराध में भी तकनीक का प्रयोग होने लगा है लेकिन अन्वेषण के दौरान जांच अधिकारी के पास तकनीकी ज्ञान एवं दक्षता में कमी और अवांछित हस्तक्षेप से पुलिस को साक्ष्यों के संग्रहण व गवाहों को न्यायालय तक लाने और सही बयान दर्ज कराने में तमाम व्यावहारिक

एक-तिहाई महिला पुलिस बल किस हद तक महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के मुकाबले के लिए विशेष ट्रेनिंग ले पाता है और वे पुलिस फोर्स में लैंगिंग भेदवाद का कैसे सामना करेगी। बीते वर्ष यौन उत्पीड़न के बहुत से हाई प्रोफाइल केस सामने आए जिनमें जजों, धार्मिक गुरुओं से लेकर एनजीओ नेता तक शामिल थे पर नए कानून ने साबित किया कि कोई उससे बच नहीं सकता। महिलाएं भी धमकियों से बिना घबराए समाज को सचेत कर रही हैं कि कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न को हलके में नहीं लिया जाएगा।

महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण के मद्देनजर महिला व बाल विकास मंत्रालय ने 1993 में निर्मित राष्ट्रीय महिला कोष को पुनर्जीवित करते हुए तीन वर्षों में 10 लाख महिलाओं को कोष के माध्यम सहायता देने की बात कही है। यह देश के आर्थिक विकास के लक्ष्य को देखते हुए बड़ी संख्या तो नहीं है, फिर भी एक शुरुआत है, जिसे महिला



आंदोलन को लागू करवाने के लिए पहल करनी चाहिये और बेरोजगार महिलाओं को भारी संख्या में प्रेरित करना चाहिये कि वे इसका लाभ उठाएं। बीते वर्ष मोदी सरकार ने सौ करोड़ की महत्वाकांक्षी 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना की भी घोषणा की है, जिसे महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के साथ-साथ शिक्षा तथा स्वास्थ्य मंत्रालय को सौ जिलों में लागू करना है, जहां लिंग अनुपात बलिकाओं के खिलाफ है। इसका लक्ष्य है तमाम क्लिनिकों में प्रतिबन्धित 'सेक्स डिटरमिनेशन टेस्ट' और स्त्री भ्रूण हत्या रोकना। देश में ऐसी अवैध कार्यवाहियों को रोकने के लिए क्लिनिकों में निरीक्षण और नियमितीकरण की जिस प्रक्रिया की जरूरत है, वह किस सरकारी तंत्र द्वारा संभव होगा, इस पर अभी मंत्रालय को विचार करना बाकी है।

बेटियों को आत्मनिर्भर बनाने हेतु महिला विद्यालयों, छात्रावासों के निर्माण और सस्ती यातायात व्यवस्था के लिए सौ करोड़ का अनुदान काफी कम है। इसे कम-से-कम

कठनाइयां झेलनी पड़ती हैं जिससे न सिर्फ मामला कमजोर पड़ता है बल्कि पीड़ित पक्ष और समाज में असंतोष भी बढ़ता है। यही कारण है कि हर तीसरे मामले में सीबीआई जांच की मांग उठती है।

न्यायालय ने अन्वेषण पुलिस को सुरक्षा पुलिस से अलग करने का निर्देश दिया था जिसमें केंद्र व राज्य अब तक विफल हैं। हालांकि केंद्र सरकार ने शीर्ष न्यायालय को जानकारी दी है कि पुलिस की रिसर्च विंग बीपीआरडी ने मॉडल पुलिस एक्ट-2014 का प्रारूप (ड्राफ्ट) तैयार कर लिया है जो विचार के लिए गृह मंत्रालय के पास है। लेकिन विचार की प्रक्रिया तो पिछले आठ सालों से चल रही है। धरातल पर कोई बदलाव नहीं। पुलिस का मूल्यांकन तो उसके निष्पादन और जनमानस में उसकी आस्था से होता है। हालांकि नई सरकार से उम्मीद है क्योंकि केंद्र की तरफ से सॉलिसिटर जनरल ने न्यायालय को बताया कि पुलिस एक्ट, 2014 में निचले दर्जे के पुलिसकर्मियों को प्रशिक्षण और हर प्रोन्नति से पहले ट्रेनिंग देने का प्रावधान है और हर थाने में अलग जांच यूनिट गठित करने का भी निर्देश है। परन्तु सारा हल धरातल पर इन सुधारों के दिखने से होगा। केंद्र सरकार के लिए पुलिस तंत्र में बुनियादी और व्यापक सुधार लाने का यह अच्छा मौका है क्योंकि राज्यों में भी अब बीजेपी और घटक दलों की सरकारें बन रही हैं जिससे मतभेद की स्थिति नहीं होनी चाहिए। मामला राष्ट्रीय राजधानी का हो या पूरे देश का, पुलिस के सामने बड़ी समस्या उसकी संख्या बल में कमी है। पूरे देश में औसत एक लाख जनसंख्या पर महज 174 पुलिस कर्मी उपलब्ध हैं। उन पर नागरिकों की सुरक्षा का जिम्मा भी है और जांच का भी।

सरकार को चाहिए कि वह पुलिस निष्पादन की गुणवत्ता में आने वाली सभी बाधाओं का सम्यक समाधान खोजे। लोक सेवा आयोग ने तो अधिकारियों के चयन के स्तर पर ही नैतिक मूल्यों व संवेदनशीलता को खासी तरजीह देना प्रारंभ कर दिया है अब जिम्मेदारी सरकार की है कि वह हर स्तर पर पुलिस व्यवस्था में नैतिकता और मानवाधिकारों के प्रति संवेदनशीलता बनाये रखने का प्रयास करे। न सिर्फ पुलिस को सुधारने की जरूरत है बल्कि आम जनता में भी अपने विधिक अधिकारों के प्रति जागरूकता लाने की जरूरत है क्योंकि जन जागरूकता भी एक दवाब की तरह काम करता है। उम्मीद है सरकार विशेष परिस्थिति में ही सिर्फ 15000 सीसी टीवी कैमरे लगाकर सुरक्षा नहीं करेगी बल्कि व्यवस्था को इतना तत्पर बनाएगी कि आम नागरिक भी सुरक्षा प्राथमिकता में हों।

राष्ट्रीय सहारा 13.02.2015

500 करोड़ होना चाहिए। छात्राओं के लिए निशुल्क शिक्षा की व्यवस्था और होनहार छात्राओं के लिए छात्रवृत्ति की बात की जाए तो योजना काफी बड़े बजट की मांग करती है। बेटियों को सामाजिक व आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने का बीड़ा उठाया गया है, तो 11-18 वर्ष आयु की गैर-स्कूली लड़कियों को स्किल डेवलपमेंट ट्रेनिंग दिलाने और पोषण को बेहतर स्तर तक पहुंचाने के लिए 'राजीव गांधी सबला स्कीम' 2014 में शुरू हुई, उसकी सफलता का मूल्यांकन करना होगा, परंतु इस वर्ष नवम्बर में मानव संसाधन मंत्रालय की ओर से विकलांग छात्र-छात्राओं के लिए 'सक्षम छात्रवृत्ति' की घोषणा हुई है, जिसके तहत प्रति वर्ष एक हजार छात्राओं को मेरिट के आधार पर चुनकर छह लाख से कम वार्षिक आय वाले परिवारों के बच्चों को 30,000 फीस और अन्य आकस्मिक मदों में दस माह तक 2000 रुपये प्रति माह अनुदान दिया जाएगा। देखना है कि इस योजना से छात्राओं को कितना लाभ मिलता है, क्योंकि बालिकाओं को बचपन से अधिक सामाजिक अवहेलना झेलनी पड़ती है और आम तौर पर उन्हें तकनीकी शिक्षा के लिए प्रेरित नहीं किया जाता। वास्तव में छात्राओं के लिए विज्ञान और तकनीकी शिक्षा हेतु अलग महिला कॉलेजों की आवश्यकता है अन्यथा उनके लिए छात्रवृत्ति बेमानी साबित होगी। खैर, वर्ष की एक उत्साहवर्धक बात यह थी कि मंगलयान को अंतरिक्ष में छोड़ते समय जिन वैज्ञानिकों को कम्प्यूटर स्क्रीन के समक्ष मिशन की प्रगति का निरीक्षण करते हुए देखा जा रहा था उनमें एक उल्लेखनीय संख्या महिला वैज्ञानिकों की थी। परन्तु आज विज्ञान और तकनीकी शिक्षा इतनी महंगी हो गई है कि अधिकतर परिवार अपनी बेटियों को इस क्षेत्र में भेजने के लिए कर्ज लेने के लिए मजबूर हो रहे हैं। क्या सरकार इस क्षेत्र में करियर बनाने वाली छात्राओं के बारे में क्या सोच रही है, ताकि उनके लिए इस क्षेत्र में प्रवेश सुगम बनाया जा सके?

बीते साल खेल जगत में नाम रोशन करने वाली साइना नेहवाल, मेरी कॉम, बबिता कुमारी, अपूर्वी चंडेला, के संजीता चानू और दीपिका पल्लीकल जैसी खिलाड़ियों के बरक्स ढेरों प्रतिभाशाली महिला खिलाड़ी प्रशिक्षण के अभाव में बेहतर अवसरों से वंचित हैं। ऐसी प्रतिभाओं को गांव-स्तर से चुनकर राष्ट्रीय स्तर तक पहुंचाने के लिए प्रशिक्षण केंद्रों की श्रृंखला तैयार करनी होगी और महिला खिलाड़ियों के लिए विशेष कोष निर्मित करना होगा। पुरस्कारों की बात करें तो ऐसिड अटैक सर्वाइवर लक्ष्मी को अमेरिका ने अंतरराष्ट्रीय बहादुरी पुरस्कार दिया। कुल मिलाकर 2014 महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण उपलब्धियों का वर्ष रहा है और आशा है, 2015 नई संभावनाओं, नए अवसरों और नई बुलंदियों का वर्ष होगा।

राष्ट्रीय सहारा 13.02.2015

मुद्दा

अंजलि सिन्हा

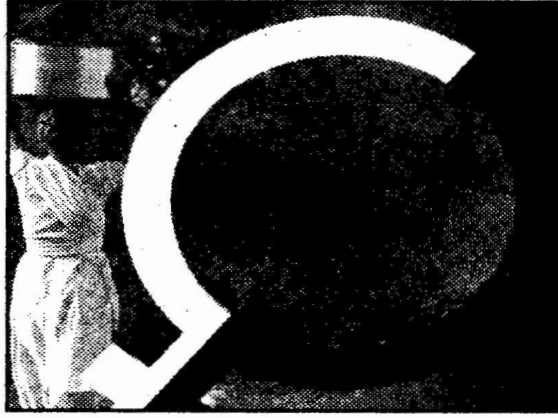
सड़क दुर्घटना में एक गृहिणी की मौत के बाद मद्रास हाईकोर्ट ने अपने फैसले के साथ जो टिप्पणी की, वह गृहिणी के घरेलू दायित्व के बारे में सोचने को प्रेरित करती है। मद्रास में सड़क दुर्घटना में एक गृहिणी की मौत के बाद उसके प्रति ने ट्रिब्यूनल में क्षतिपूर्ति की अपील की जिसके एवज में उसे मात्र एक लाख 62 हजार मुआवजा दिया गया। मामला हाईकोर्ट में गया जहां कोर्ट ने मुआवजा छह लाख 86 हजार किया। मुआवजे की राशि से ज्यादा महत्वपूर्ण वह टिप्पणी है जिसमें कोर्ट ने कहा कि ट्रिब्यूनल ने महिला के काम के महत्व को कम करके आंका है। इसे बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए। कोर्ट के फैसले को महिला सशक्तिकरण की दिशा में अहम फैसला बताया गया।

मौजूदा दौर में अलग-अलग अदालतों द्वारा ऐसे कई फैसले आए हैं जहां गृहिणी की आय तय करने की कवायद की गयी है। कुछ समय पहले दिल्ली की तीस हजारी कोर्ट के एक फैसले में सड़क हादसे में एक गृहिणी की मौत पर परिजनों को बतौर मुआवजा 7.33 लाख रुपए देने का निर्देश अदालत ने दिया। इस गृहिणी की आय अदालत ने प्रति माह छह हजार रुपए आंकी। कोर्ट ने फैसले का आधार सुप्रीम कोर्ट का अन्य जजमेन्ट बनाया। 'लता बधवा बनाम स्टेट ऑफ बिहार' केस 1989 का है जिसमें सुप्रीम कोर्ट ने उस समय गृहिणी की आय 3,000 प्रति माह आंकी थी। बढ़ती महंगाई तथा बदलती जीवनशैली के अनुरूप तीस हजारी कोर्ट ने यह राशि बढ़ा कर 6,000 कर दी। उम्र की सीमा सुप्रीम कोर्ट ने 34 से 59 साल तय की थी। पोस्टमार्टम रिपोर्ट के मुताबिक सन्तोष रानी की उम्र 50 वर्ष बतायी गयी। अतः ट्रक की इन्शोरेन्स कम्पनी को 9 साल की आय तथा साथ में कुछ हर्जाना मिला कर देने का निर्देश दिया गया।

दुर्भाग्य से किसी घरेलू महिला के काम की कीमत का आकलन तब होता है जब वह किसी दुर्घटना में घायल होती है या मौत की शिकार हो जाती है। यद्यपि गृहकार्यों की महत्ता का गुणगान यदाकदा तब होता है यह जताने के लिए कि तुम खुश और घर की दुनिया में सन्तुष्ट रहो, वरना भौतिक फायदे को देखें तो उसे इसके लिए आम तौर पर अपने पति पर निर्भर रहना होता है चाहे पेंशन हो या मेडिकल की सुविधा हो।

चेन्नई कोर्ट में प्रस्तुत हालिया मामले में अदालत ने

गृहिणी के काम का आकलन इस प्रकार किया कि यदि गृहिणी द्वारा किए जानेवाले सारे काम (खाना बनाना, कपड़े धोना, घर की साफ-सफाई आदि) सहित बीमारों की देखभाल आदि के लिए नौकर रखे जाते तो उस नौकर पर कितना खर्च करना होता? फिर हो सकता है कि घर का कमानेवाला सदस्य उतना कमाता भी नहीं हो। कोर्ट ने कहा कि जैसे हवा, पानी, आग आदि प्रकृति की तरफ से मुफ्त मिलनेवाली चीजों का मूल्यांकन हम तब तक नहीं करते जब तक उसकी कमी न हो जाय, वही स्थिति गृहकार्य के बारे में भी देखी जा सकती है। यद्यपि जीवन अमूल्य है जिसकी भरपाई मुआवजे से नहीं होती लेकिन कानून के अन्तर्गत इस भरपाई की जो व्यवस्था है उसमें गृहकार्य को कम करके नहीं आंका जाना चाहिए।



प्रश्न यह उठता है कि इन फैसलों को किस तरह देखें, क्या ऐसे फैसले महिला सशक्तिकरण की दिशा में अहम मान सकते हैं? दरअसल सशक्तिकरण सिर्फ इससे नहीं होगा कि गृहकार्य की अहमियत स्थापित हो जाए। वह काम तो चाहे जो भी करे, उसकी महत्ता बने, लेकिन औरत के सशक्तिकरण के लिए यह आवश्यक है कि अन्दर और बाहर यानी सार्वजनिक दायरे के सभी प्रकार के अवसरों में बिना भेदभाव के उसे अपनी श्रमशक्ति का योगदान कर पाने लायक हालात तैयार हों, साथ ही वह स्वयं ऐसा हासिल करने की इच्छा भी रखे। परंपरागत रूप से हमारे यहां घरेलू श्रम की आय नहीं आंकी जाती है इसीलिए वह सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में भी नहीं जुड़ती है लेकिन हमारे जैसे पितृसत्तात्मक समाज में इन अदालती निर्णयों का इस्तेमाल पितृसत्तात्मक ढांचे को मजबूत करने के लिए किया जा सकता है। महिलाओं की समस्या के खिलाफ चले आन्दोलनों और संघर्षों में केन्द्रीय मुद्दा सामाजिक-शारीरिक उत्पीड़न का रहा है। उस समय वही एजेंडा पर था

विडम्बना है कि घरेलू हों या कामकाजी-मानसिक तनाव और अवसाद महिलाओं के जीवन में जड़ जमा रहा है और इस कारण हमारा सामाजिक और पारिवारिक ढांचा प्रभावित हो रहा है। 2012 में आई एक रिपोर्ट के अनुसार तकरीबन 57 फीसद महिलाएं मानसिक विकारों की शिकार रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार हर पांच में एक महिला और हर बारह में से एक पुरुष मानसिक व्याधि का शिकार है। हमारे यहां लगभग 50 प्रतिशत लोग किसी न किसी गंभीर मानसिक विकार से जूझ रहे हैं। सामान्य मानसिक विकार के मामले में तो यह आकड़ा और भी भयावह है- खासकर महिलाओं के मामले में। 1982 में



भारत में राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम की शुरुआत का उद्देश्य था जनमानस में मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता लाई जाय। 1987 में मेंटल हैल्थ एक्ट बना जो मनोरोगों को संबोधित कानून है। बावजूद इसके आज तक हमारे यहां मानसिक रोगों के इलाज संबंधी सेवाओं और मनोचिकित्सकों की भारी कमी है। आज दुनिया भर में 45 करोड़ से भी अधिक लोग मानसिक रोगी हैं और पांच करोड़ भारतीय ऐसी मानसिक अस्वस्थता से जूझ रहे हैं जो गंभीर तो नहीं पर आने वाले समय में भयावह रूप ले सकती है। ऐसे में मानसिक रोगियों की बढ़ती संख्या भारत ही नहीं, वैश्विक स्तर पर भी चिंता का बड़ा सबब है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 2020 तक भारत में अवसाद दूसरा सबसे बड़ा

क्योंकि वही प्रत्यक्ष और क्रूर दिखता था। उन सभी उत्पीड़नों से तो मुक्ति चाहिए ही लेकिन बराबरी के लिए आर्थिक आधार का बराबर होना भी जरूरी है। तो क्या घर के काम के बदले वेतन मांगा जाए? यह समाधान नहीं हो सकता क्योंकि वह कौन देगा? यदि घर की आय में से ही उसे भी पारिश्रामिक मिल जाए तो घर की स्थिति में क्या फर्क पड़ जाएगा? सरकार, पूंजीपति या मालिक औरत को घर में वेतन देने नहीं आएगा। हालांकि घरेलू श्रम का अप्रत्यक्ष लाभ उसे मिलता है। दूसरी बात, अप्रत्यक्ष श्रम का मुआवजा लेना दूरगामी तौर पर औरत के हक में नहीं होगा क्योंकि प्रत्यक्ष उत्पादन कार्यों की वह हिस्सेदार नहीं बन पाएगी। बराबरी के लिए जरूरी है कि वह प्रत्यक्ष कामगार की श्रेणी में आए। इसका अर्थ यह नहीं कि घर का काम कम महत्व का है बल्कि इस अति महत्वपूर्ण काम को घर के सभी सदस्य मिलजुल कर सम्पन्न करेंगे।

बहरहाल, ये फैसले मुद्दों को समझने के लिए ठीक हैं किन्तु सिर्फ इसे मान लेने भर से जमीनी स्थिति में बदलाव नहीं आयेगा क्योंकि उसके घरेलू काम के आकलन का मौका तो मरने के बाद आएगा। औरत की सार्वजनिक दायरे में अधिक से अधिक उपस्थिति पूरे समाज के वातावरण को बदलेगी तथा उनकी स्थिति भी इससे बदलेगी। अन्ततः सार्वजनिक और निजी दोनों दायरों में न्याय और बराबरी के मुद्दे को एजेंडा पर लेना पड़ेगा और समाधान निकालना पड़ेगा। यह भी हकीकत है कि किसी काम का महत्व चाहने मात्र से नहीं मिल जाता है। वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था में उसी वस्तु और श्रम का मूल्य है जिसके बदले पैसा मिलता हो। इसीलिए औरत और पुरुष के बराबर की सामाजिक हैसियत के लिए जरूरी है कि वह भी परिवार में प्रत्यक्ष कमानेवाली सदस्य बने तथा वह सारे अवैतनिक काम जो जरूरी हैं उसे पुरुष भी निभाये। इसमें वही काम सिर्फ औरत के जिम्मे रह जाएगा जो प्राकृतिक है जैसे बच्चा पैदा करना तथा कुछ महीनों तक स्तनपान कराना। यह जीवन के कुल काम और समय का छोटा हिस्सा होगा।

हालात बदल रहे हैं लेकिन आर्थिक हैसियत में गैरबराबरी अभी अधिक है। यह हकीकत है कि महिलाएं बड़े पैमाने पर श्रमशक्ति का हिस्सा बनी हैं लेकिन उन्हें अधिकतर अवसर असंगठित क्षेत्रों में मिला है, जहां किसी भी प्रकार की सुविधा या सुरक्षा नहीं है। न स्वास्थ्य की, न पेंशन की, न नौकरी में बने रहने की। 90 से 95 फीसद श्रमिक महिलाएं यहीं काम करती हैं। आज भी उनके श्रम का बड़ा हिस्सा अदृश्य है तथा घर का बिना पारिश्रामिकवाला श्रम उन्हीं के जिम्मे होता है। इसीलिए कहा जाता है कि वह दोहरे बोझ की शिकार है।

राष्ट्रीय सहारा 13.02.2015

रोग होगा और यह महिलाओं में सबसे आम बीमारी होगी।

महिलाओं के साथ समाज में मौजूद भेदभावपूर्ण व्यवहार, घरेलू हिंसा और बलात्कार जैसे मामले हर उम्र की महिलाओं को मानसिक रोगी बना रहे हैं। यूनाइटेड नेशन्स की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में दो तिहाई घरेलू महिलाएं हिंसा का शिकार हैं। 2009 में राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण की एक रिपोर्ट के मुताबिक हमारे देश में 40 फीसद महिलाएं रोज किसी न किसी बहाने पति की मारपीट का शिकार होती हैं। शोध बताते हैं कि अपनों से मिलने वाला अमानवीय और कटुतापूर्ण व्यवहार मानसिक स्वास्थ्य को सबसे अधिक हानि पहुंचाता है।

आधी आबादी के मानसिक स्वास्थ्य बिगाड़ने वाली शारीरिक और मानसिक हिंसा घरेलू ही नहीं कामकाजी और आत्मनिर्भर महिलाएं भी झेलती हैं। यह भी भ्रम है कि अशिक्षित और निचले तबके में ऐसे मामले अधिक होते हैं जबकि हकीकत में नौकरी करने वाली लगभग 80 फीसद महिलाओं को घर में रहने वाली पत्नियों की तुलना में पति की ज्यादतियों का अधिक शिकार होना पड़ता है। यही वजह है कि महानगरों में रहने वाली कामकाजी स्त्रियों में मानसिक तनाव और अवसाद अधिक देखने को मिल रहा है। घर व दफ्तर में जिम्मेदारियों पर खरा उतरने का दबाव उन्हें अवसाद और तनाव का शिकार बना रहा है।

कई बार देखने में आता है कि मानसिक रूप से बीमार महिलाओं के परिवारीजन डॉक्टरों इलाज के बजाय झाड़फूंक और टोटकों में फंस जाते हैं। ऐसे में वे शारीरिक उत्पीड़न की शिकार भी बनती हैं। कई बार तो झाड़फूंक का यह खेल उनकी शारीरिक और मानसिक सेहत को और नुकसान पहुंचाता है। ऐसी महिला को डायन बना या पागल बता घर और जायदाद छिन लेने के समाचार भी सुखियां बनते रहे हैं। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हैल्थ एंड न्यूरो साइंसेज के अनुसार भारत में आज दो करोड़ से अधिक लोग गंभीर मेंटल डिसऑर्डर का शिकार हैं। चिंतनीय है कि महिलाओं में यह स्थिति तेजी से बढ़ रही है। ऐसे में देश की आधी आबादी के मानसिक स्वास्थ्य को प्राथमिकता देना आवश्यक है। आज महिलाओं का बड़ा प्रतिशत कामकाजी है। यानी घर परिवार की धुरी होने के साथ ही आर्थिक क्षेत्र में भी उनकी अहम भूमिका है। ऐसे में महिलाओं में तनाव और अवसाद के बढ़ते मामले न केवल विचारणीय हैं बल्कि यह भी बताते हैं कि अच्छी मानसिक सेहत के बिना महिला सशक्तिकरण के मायने कुछ नहीं।

राष्ट्रीय सहारा 13.02.2015

मुद्दा

मोनिका शर्मा

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वास्थ्य का अर्थ मात्र रोगों का अभाव नहीं बल्कि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की सकारात्मक स्थिति से भी है। इस परिभाषा को आधार बनाया जाए तो हमारे यहां महिलाओं के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति बहुत ही चिंताजनक है। उनमें शारीरिक बीमारियां तो हैं ही, मानसिक व्याधियों के आंकड़े भी चौंकाने वाले हैं। घर-बाहर की दोहरी जिम्मेदारी उठा रही महिलाएं भावनात्मक व मानसिक स्तर पर कमजोर होती जा रही हैं। घर-परिवार के हर सदस्य की सेहत का खयाल रखने वाली महिलाएं अपने स्वास्थ्य को हमेशा नजरअंदाज कर देती हैं। स्वास्थ्य संभाल की फेहरिस्त में वह खुद को दोयम दर्जे पर रखती हैं। हैरानी यह कि घर के लोग भी उनकी खास तवज्जो नहीं देते।

महिलाओं को दोयम दर्जे पर रखी जाने वाली सोच उनकी सेहत पर भी लागू होती नजर आती है। वे अपनी शारीरिक और मानसिक तकलीफों के बारे में खुलकर बात नहीं कर पाती। नतीजतन उन्हें न सही समय पर इलाज मिल पाता है और न सलाह। ग्रामीण इलाकों में तो स्थितियां और भी बदतर हैं। वहां जागरूकता की इतनी कमी है कि कई बार वह नीम हकीमों के जाल में उलझ जाती हैं। गांव हो या शहर ऐसे कई किस्से सुनने को मिल जाएंगे कि जब तक महिलाएं डॉक्टर पास इलाज के लिए आती हैं, तब तक बीमारी काफी बढ़ चुकी होती है। इसकी सबसे बड़ी वजह जानकारी की कमी और पारिवारिक सहयोग का अभाव है। आज भी अनगिनत औरतों के साथ उनके पति हिंसात्मक व्यवहार करते हैं। चारदीवारी के भीतर महिलाओं के साथ होने वाला यह बर्ताव उन्हें सामाजिक, राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर सशक्त बनाने की सारी कवायदों को तो बेमानी साबित करता ही है, उन्हें कई तरह की मनोवैज्ञानिक बीमारियों की ओर भी धकेलता है। महिलाएं अक्सर अंदरूनी शारीरिक बदलावों और समस्याओं को लेकर भीतर ही भीतर जूझती रहती हैं। इस कारण शारीरिक व्याधियों के साथ ही उनका मानसिक स्वास्थ्य भी बिगाड़ने लगता है। मानसिक बीमारी के मामले में पुरुषों की अपेक्षा महिला रोगियों की संख्या दोगुनी है।

महिला चालक थामेंगी बस की स्टीयरिंग

अमर उजाला ब्यूरो

नई दिल्ली। महिलाओं की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए देश में पहली बार पब्लिक ट्रांसपोर्ट में दिल्ली ट्रांसपोर्ट कॉरपोरेशन (डीटीसी) महिला चालकों की भी नियुक्त करेगा। फिलहाल महिला ऑटो चालक तो कई राज्यों में सेवाएं दे रही हैं, लेकिन महिला बस चालक नहीं हैं। डीटीसी चयनित महिला आवेदकों को पहले ट्रेनिंग और हेली मोटर वाहन (एचएमवी) लाइसेंस मिलने के बाद कॉन्ट्रैक्ट के आधार पर बसों की स्टीयरिंग संभालने का जिम्मा सौंपेगी।

डीटीसी प्रबंधन ने पहली बार महिला चालकों से बस

देश में महिला चालक का पहला पब्लिक ट्रांसपोर्ट बनेगा डीटीसी

प्रशिक्षण के बाद हेली लाइसेंस मिलने पर मिलेगी नौकरी

एलएमवी-एचएमवी लाइसेंस धारक को तीन-छह हजार प्रति माह

प्रशिक्षण के दौरान मिलेगा भत्ता

डीटीसी महिला ड्राइवरों को स्वयं तैयार करेगा। जिस महिला के पास वैध व्यावसायिक एलएमवी लाइसेंस होगा, उसे प्रशिक्षण के दौरान तीन हजार रुपये का प्रशिक्षण भत्ता भी मिलेगा। जबकि प्रशिक्षण के बाद एचएमवी लाइसेंस मिलने पर छह हजार प्रति महीना प्रशिक्षण भत्ता मिलेगा। हालांकि पूरे प्रशिक्षण भत्ते का लाभ लेने के लिए 25 दिनों की हाजिरी अनिवार्य होगी। इसके बाद दिल्ली ट्रांसपोर्ट विभाग एचएमवी लाइसेंस व पीएसवी बैज भी जारी करेगा, जिसके आधार पर वे कॉन्ट्रैक्ट के तहत नौकरी कर सकेंगी।

चलाने के लिए आवेदन मांगे मुख्यालय में 12 जनवरी तक हैं। इच्छुक महिला उम्मीदवारों को इंटरप्रस्थ स्थित डीटीसी

मुख्यालय में 12 जनवरी तक व्यक्तिगत अपना आवेदन जमा करना होगा। देश के किसी भी



राज्य से 10वीं पास व 40 आयु वर्ग तक की महिलाएं आवेदन कर सकेंगी।

हालांकि उनके पास राज्य परिवहन प्राधिकरण दिल्ली सरकार द्वारा वैध व्यावसायिक एलएमवी लाइसेंस होना जरूरी है। आरक्षित वर्गों की महिलाओं को तय नियमों के तहत आयु में छूट मिलेगी।

अमर उजाला 07.01.2015



विज्ञान भवन में गुरुवार को आयोजित कार्यक्रम के दौरान 'हिम्मत' मोबाइल एप लॉन्च करते केन्द्रीय गृह मंत्री राजनाथ सिंह।

महिला सुरक्षा

महिलाओं से जुड़े मामलों के निपटारे में संवेदनशीलता सहित पारदर्शिता लाने के मकसद से उठाया कदम

महिला शिकायतों का ब्यौरा अब एसएमएस पर

अनूप कुमार मिश्र | नई दिल्ली

दिल्ली पुलिस की 'स्पेशल पुलिस यूनिट फार वूमेन एण्ड चाइल्ड' में शिकायत दर्ज कराने वाली महिला शिकायतकर्ताओं को अपने मामले से जुड़ी सभी जानकारियां अब एसएमएस पर उपलब्ध होंगी। स्पेशल पुलिस यूनिट फार वूमेन एण्ड चाइल्ड ने यह पहल महिलाओं से जुड़े मामलों के निपटारे में संवेदनशीलता सहित पारदर्शिता लाने के मकसद से किया है।

अब स्पेशल पुलिस यूनिट फार वूमेन एण्ड चाइल्ड में शिकायत दर्ज कराने वाली महिलाओं को केस की प्रगति के बाबत जानकारी हासिल करने के लिए बार-बार

पुलिस स्टेशन के चक्कर लगाने के लिए मजबूर नहीं होना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त केस की जांच के लिए नियुक्त अधिकारी की जिम्मेदारी तय करते हुए पूरी जांच प्रक्रिया पर आला अधिकारी अपनी निगाह रख सकेंगे।

स्पेशल पुलिस यूनिट फार वूमेन एण्ड चाइल्ड से जुड़े वरिष्ठ अधिकारी के अनुसार शिकायत मिलते ही महिला शिकायतकर्ता का मोबाइल नंबर एक साफ्टवेयर में दर्ज कर दिया जाएगा। साफ्टवेयर में मामले के आरोपियों सहित उस पुलिस अधिकारी का नंबर भी दर्ज किया जाएगा, जिसे इस केस की जांच सौंपी जाएगी। साफ्टवेयर में सभी नंबर दर्ज

होते ही एक एसएमएस वादी-प्रतिवादी पक्ष के साथ-साथ पुलिस अधिकारी को पहुंच जाएगा। इस प्रक्रिया से शिकायतकर्ता को सुनिश्चित कराया जाएगा कि उसका केस दर्ज हो गया है और उक्त अधिकारी को मामले की जांच सौंपी गई है। आरोपी पक्ष को पता चलेगा कि उसके खिलाफ एक मामला दर्ज किया गया है। वहीं पुलिस अधिकारी को पता चलेगा कि संबंधित मामले की जांच उसे सौंपी गई है। केस की जांच में सामने आने वाले तथ्यों को जांच अधिकारी इस साफ्टवेयर में दर्ज करेगा। जिससे इन तथ्यों के बाबत शिकायतकर्ता और आरोपी पक्ष तक जानकारी पहुंच जाएगी।

दैनिक भास्कर 20.03.2015

एसएमएस से पेशी का समन

शिकायत में महिला शिकायतकर्ता द्वारा उल्लेखित आरोपियों को पेशी का समन भेजने के लिए एसएमएस से ही भेजा जाएगा। अभी तक यह समन स्पेशल पुलिस यूनिट फार वूमेन एण्ड चाइल्ड से जुड़ा एक पुलिस अधिकारी लिखित समन लेकर आरोपियों तक पहुंचता था। कई बार आरोपियों के घर में मौजूद न होने के चलते समन की तालीमी नहीं हो पाती है। इस समस्या से निजात पाने के लिए पुलिस ने पेशी का समन एसएमएस के जरिए आरोपियों तक पहुंचाने की पहल शुरू की है। स्पेशल पुलिस यूनिट फार वूमेन एण्ड चाइल्ड के अधिकारी मामले में आरोपी को भी एसएमएस के जरिए मामले की प्रगति के बाबत अवगत कराएंगे।

महिला सुरक्षा के लिए उठाए गए कदम

- 100 नंबर वाली हेल्पलाइन की संख्या 40 से 100 की गई
- 1091 नंबर वाली हेल्पलाइन की संख्या 4 से 10 की गई
- सभी थानों में सातों दिन और 24 घंटे महिला हेल्प डेस्क
- हर पुलिस थाने में महिलाओं की शिकायत सुनने के लिए महिला पुलिसकर्मी
- महिलाओं की सुरक्षा की दृष्टि से 300 बस रुट पर विशेष नजर
- सौ पीसीआर वैन में महिला पुलिसकर्मी की तैनाती
- परिवर्तन स्कीम के तहत 398 बीट पर महिला पुलिसकर्मी की तैनाती
- थाना स्तरीय कमेटी में महिला की भागीदारी
- तीन सौ बस स्टैंड पर विशेष तैनाती
- 141 महिला सब इंस्पेक्टर और 1200 महिला कॉन्स्टेबल की भर्ती
- एनजीओ के साथ विशेष आयुक्त (ट्रैफिक) की हर माह मीटिंग
- अज्ञात कॉल और पीछा करने की शिकायत पर विशेष जांच
- 859 पीसीआर वैन को रात में महिलाओं की सुरक्षा पर विशेष ध्यान देने का निर्देश
- महिलाओं की सुरक्षा के लिए बाइक और इमरजेंसी व्हीकल की गश्त
- दुष्कर्म के आरोपियों को दिल्ली पुलिस की वेबसाइट पर डालना (अब तक 1364 आरोपियों को डाला गया)

अमर उजाला 03.01.2015

महिलाएं अपने घर में भी सुरक्षित नहीं

अमर उजाला ब्यूरो

नई दिल्ली। घर भी महिलाओं के लिए सुरक्षित नहीं है। दुष्कर्म के मामले में दिल्ली पुलिस के आंकड़े यहीं दर्शाते हैं। राजधानी में 96 फीसदी रेप के मामलों में आरोपी पीड़िता का परिचित व रिश्तेदार ही होते हैं। जबकि चार फीसदी मामलों में अनजान व्यक्ति आरोपी होता है।

दिल्ली पुलिस के आंकड़ों के मुताबिक इस वर्ष दर्ज रेप की 2069 घटनाएं दर्ज की गईं। जिसमें 919 (44.42 फीसदी) मामलों में आरोपी पीड़िता का दोस्त व पारिवारिक जानकार है। 420 (20.30 %) मामलों में आरोपी पीड़िता का पड़ोसी, 298 (14.40%) जानकार, 282 (13.62%) रिश्तेदार, 66 (3.19%) सहकर्मी है। आंकड़ों के मुताबिक दिल्ली पुलिस ने रेप की 84 (4.06%) ऐसे मामले दर्ज किए जिसमें आरोपी की पीड़िता से कोई जान पहचान नहीं थी। दिल्ली पुलिस के मुताबिक इस वर्ष दर्ज रेप के मामले में 586 (28.32 %) ऐसे मामले में हैं जिसमें पीड़िता आरोपी के साथ लिव-इन रिलेशन में रह रही थी और शादी से इंकार करने पर पीड़िता ने रेप का मामला दर्ज कराया।

96 फीसदी मामलों में पीड़िता के परिचित ही होते हैं दुष्कर्म के आरोपी

28 फीसदी लिव-इन में रहने वाले देते हैं वारदात को अंजाम

महिला अपराधों में हुई बेतहाशा वृद्धि

अपराध	2011	2012	2013	2014
दुष्कर्म	572	706	1636	2069
छेड़छाड़	657	727	3515	4179
फीसिया	162	214	916	1282
दहेज हत्या	142	134	144	147
दहेज प्रताड़ना	1585	2046	3045	3005
दहेज मांग	7	15	15	13
अपहरण	2085	2210	3609	3887
पोक्सो एक्ट			136	105
हेल्पलाइन नंबर पर किया संपर्क	नंबर	2013	2014	
100		10409	12552	
1091		51743	53708	
महिला हेल्पडेस्क		58766	36284	

यह एप खासकर कामकाजी महिलाओं सहित देर रात अकेले सफर करने वाली महिलाओं के लिए मददगार साबित होगा

नए साल के अवसर पर दिल्ली पुलिस ने राजधानी की महिलाओं को 'हिम्मत' मोबाइल एप का तोहफा दिया है। इस एप की मदद से महज एक बटन दबाकर महिलाएं दिल्ली पुलिस की मदद हासिल कर सकेंगी। यह एप खासकर कामकाजी महिलाओं सहित देर रात्रि अकेले सफर करने वाली महिलाओं के लिए मददगार साबित होगा।

दिल्ली पुलिस द्वारा महिलाओं के लिए तैयार कराए गए हिम्मत एप को गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने विज्ञान भवन में आयोजित एक कार्यक्रम के दौरान लॉन्च किया। दिल्ली पुलिस ने गूगल प्ले और अपनी आधिकारिक वेबसाइट पर गुरुवार शाम चार बजे से महिलाओं के लिए उपलब्ध करा दिया है। फिलहाल यह एप एंड्रॉयड फोन पर काम करेगा। जल्द ही दिल्ली पुलिस दूसरे ऑपरेटिंग सिस्टम में इस एप को उपलब्ध कराएगी।

कब करें इस्तेमाल: महिलाओं को यदि किसी भी क्षण लगता है कि उनकी जिंदगी खतरे में है तो वे इस एप के जरिए दिल्ली पुलिस के केंद्रीय नियंत्रण कक्ष से अपने मोबाइल का महज एक बटन दबाकर संपर्क स्थापित कर सकती है। दिल्ली पुलिस एप के जरिए मांगी गई मदद पर त्वरित कार्रवाई करेगी।

कैसे करें इस्टॉल: हिम्मत एप को दिल्ली पुलिस की आधिकारिक वेबसाइट पर उपलब्ध लिंक अथवा गूगल प्ले स्टोर से हासिल किया जा सकता है। मोबाइल में हिम्मत एप को इस्टॉल करने के बाद महिलाओं को अपना नाम, मोबाइल नंबर और दो करीबी जानकारों का मोबाइल नंबर दर्ज कर रजिस्टर्ड कराना होगा। रजिस्ट्रेशन की प्रक्रिया पूरी होने के बाद महिला के मोबाइल और करीबी जानकारों के मोबाइल पर कन्फर्मेशन मैसेज पहुंच जाएगा। इस प्रक्रिया को सिर्फ एक बार ही पूरा करना होगा।

कैसे करें इस्तेमाल: विपत्ति के दौरान समयाभाव और मानसिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए एप के इस्तेमाल को बहुत सरल बनाया गया है। इसे इस्तेमाल करने के लिए तीन विकल्प हैं। पहला विकल्प मोबाइल को शेक (हिलाकर) करके इस्तेमाल किया जा सकता है। जबकि दूसरे विकल्प में पॉवर की बटन और तीसरे विकल्प में शाफ्ट की को लगातार दबाकर एप के जरिए पुलिस मुख्यालय स्थित केंद्रीय पुलिस नियंत्रण कक्ष से संपर्क स्थापित किया जा सकता है।

एप कैसे करेगा काम: पॉवर बटन, शाफ्ट बटन या मोबाइल शेक करने पर एप तत्काल केंद्रीय पुलिस नियंत्रण कक्ष को संदेश भेज देगा। यह संदेश केंद्रीय पुलिस नियंत्रण कक्ष के साथ साथ एक संदेश आपके द्वारा दर्ज कराए गए दो करीबियों के मोबाइल पर भी चला जाएगा। इस संदेश के साथ एप के इस्तेमाल के दौरान आपकी मौजूदगी वाले स्थान और समय की जानकारी पुलिस और आपके करीबियों तक पहुंच जाएगी। इसके अलावा आपके फेसबुक एकाउंट में भी यह संदेश प्रसारित हो जाएगा। संदेश मिलने के बाद पुलिस नियंत्रण कक्ष तत्काल आपसे संपर्क करेगा। इसी दौरान सभी समीपवर्ती पीसीआर वैन, स्थानीय थाने के एसएचओ और दिल्ली पुलिस साइबर हाईवे को आपका संदेश प्रसारित कर दिया जाएगा। इस कवायद के जरिए आपके पास जल्द से जल्द मदद पहुंचाने की कोशिश दिल्ली पुलिस करेगी।

दैनिक भास्कर 02.01.2015

रेल में महिलाओं की सुरक्षा को तैयार हो रही महिला बटालियन

हेमंत रस्तोगी

नई दिल्ली। नरेंद्र मोदी सरकार के आने के बाद रेल मंत्रालय ने अपने बजट में महिलाओं की सुरक्षा को प्रमुख एजेंडा बनाया था। मंत्रालय ने अब इस दिशा में कदम कसते हुए रेलवे सुरक्षा बल (आरपीएफ) में अपनी पहली महिला बटालियन की तैयारी कर ली है। रेलवे ने जहां आरपीएफ में तैनात अपनी 1600 महिला सुरक्षा कर्मियों के लिए विशेष ट्रेनिंग कार्यक्रम शुरू कर दिया है, वहीं इस माह आरपीएफ में दो हजार महिला कांस्टेबलों की भर्ती के लिए अधिसूचना जारी करने जा रहा है। रेलवे ने कुल चार हजार महिला सुरक्षा कर्मियों की भर्ती की घोषणा की है।

आरपीएफ की ओर से पहले ही घोषणा की जा चुकी है कि रेलवे की सुरक्षा के लिए 13 हजार पुरुष कांस्टेबलों और चार हजार महिला कांस्टेबलों की भर्ती निकट भविष्य में की जाएगी। रेलवे सूत्रों का कहना है कि आरपीएफ में महिला बटालियन मंत्रालय के एजेंडे में प्रमुख है। इसी को ध्यान में रखते हुए महिला कर्मियों का विशेष ट्रेनिंग कार्यक्रम शुरू किया गया है। आरपीएफ की चिंता का विषय यह है कि उसके पास महज 1600

रेल मंत्रालय इस माह दो हजार महिला कांस्टेबलों की भर्ती के लिए जारी करेगा अधिसूचना, कुल 4000 महिला कांस्टेबल की भर्ती होगी

महिला सुरक्षा कर्मी ही हैं। बटालियन के लिए उसे और अधिक सुरक्षा कर्मियों की जरूरत है। इसी को ध्यान में रखते हुए आरपीएफ ने दो हजार महिला कांस्टेबलों की भर्ती के लिए इसी माह अधिसूचना जारी करने का निर्णय लिया है। हालांकि आरपीएफ की कोशिश यही है कि भर्ती प्रक्रिया शुरू होने के साथ ही महिला बटालियन की स्थापना कर दी जाए। इसके बाद ही ट्रेनों में विशेष रूप से महिला सुरक्षा कर्मियों की तैनाती का काम शुरू किया जाएगा। स्टेशनों पर भी अलग से अधिक संख्या में महिला सुरक्षा कर्मियों को इसके बाद ही तैनात किया जा सकेगा। आरपीएफ के एक वरिष्ठ अधिकारी का कहना है कि महिला कांस्टेबलों की भर्ती के लिए लगभग सारी प्रक्रियाएं पूरी हो चुकी हैं। मात्र कुछ औपचारिकताओं के बाद अधिसूचना जारी कर दी जाएगी और इस संबंध में ऑनलाइन आवेदन किया जा सकेगा।

अमर उजाला 06.01.2015

दिल्ली पुलिस में महिलाओं को 33 फीसदी आरक्षण

अमर उजाला ब्यूरो/एजेंसी

नई दिल्ली। सरकार ने दिल्ली पुलिस सहित सभी केंद्र शासित प्रदेशों के पुलिस बल में महिलाओं के लिए 33 फीसदी के आरक्षण का फैसला किया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अगुवाई वाली कैबिनेट ने शुक्रवार को यह फैसला लिया। इस फैसले का मकसद पुलिस को महिलाओं के मामले में ज्यादा संवेदनशील बनाना है।

इसके मुताबिक, पुलिस के अराजपत्रित पदों यानी हवलदार से सब-इंस्पेक्टर तक के 33 फीसदी पद महिलाओं के लिए आरक्षित रहेंगे। इस आरक्षण का लाभ एससी, एसटी और ओबीसी की महिलाओं को भी मिलेगा। कैबिनेट ने यह भी फैसला लिया है कि इन स्थानों को भरने के लिए केंद्र शासित प्रदेश खास इंतजाम करें। कैबिनेट की मंजूरी के बाद आदेश जारी करने की तारीख से ही महिलाएं यह आरक्षण पाने की हकदार हो जाएंगी।

सरकार केंद्रीय अर्धसैनिक बलों में भी महिलाओं के आरक्षण पर विचार कर रही है। सरकार ने जारी बयान में कहा है कि आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में



कैबिनेट ने सभी केंद्र शासित क्षेत्रों की पुलिस में महिला आरक्षण को दी मंजूरी

अराजपत्रित पदों पर मिलेगा महिलाओं को यह लाभ

महिलाओं की भागेदारी के बिना देश आगे नहीं बढ़ सकता। दिल्ली निर्भया कांड के बाद दुष्कर्म और महिला उत्पीड़न के खिलाफ बने नए कानून में पुलिस बल में महिलाओं की अधिक भागेदारी का प्रावधान है। हालांकि तकनीकी वजहों से इस दिशा में तेजी से काम नहीं हो पा रहा था। सरकार का मानना है कि इन फैसलों से सुरक्षा बलों पर महिलाओं का भरोसा बढ़ेगा। सरकार ने कहा कि इस फैसले से महिलाएं मदद या सुरक्षा मांगने के लिए बिना किसी हिचक के पुलिस के पास जाने को प्रेरित होंगी।

अमर उजाला 21.03.2015

महिला, बाल विकास पर बजट ने चलाई कैंची

महिला सुरक्षा को लेकर केंद्र की खुली कलई

प्रियंवदा सहाय

नई दिल्ली। महिला सुरक्षा को लेकर केंद्र सरकार की गंभीरता की कलई खुलती जा रही है। बेशक प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पिछले नौ माह में महिलाओं की सुरक्षा, सशक्तिकरण और उनके हक को लेकर अपनी संवेदनशीलता जाहिर करते आए हैं। लेकिन महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के बजट में 50 फीसदी से अधिक की कटौती कर दी गई है।

पिछले साल बजट में इस मंत्रालय के लिए 21100 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया था। लेकिन 2015-16 के लिए यह घटकर 10,286.73 करोड़ हो चुका है। ऐसे में महिलाओं के हित में बनने वाली कई योजनाओं और कार्यक्रमों के आवंटन में कटौती भी तय है। इसी तरह महिलाओं को अधिकार व सुरक्षा मुहैया कराने के लिए गठित राष्ट्रीय महिला आयोग

सरकार ने आवंटन में 50 फीसदी की कटौती की

बच्चों के स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं के फंड में भी 22 फीसदी कटौती

बाल शिक्षा से जुड़े कोष में 25% तक की कमी हुई

का बजट भी 4.20 करोड़ रुपये कम कर दिया गया है। वहीं बाल विकास के लिए आवंटन भी पिछले साल के मुकाबले कम हो गया है।

बजट में बच्चों से संबंधित लगभग सभी प्लैगशिप योजनाओं का फंड कम कर दिया गया है, जो निराशाजनक है। जानकारों के मुताबिक बच्चों के स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं के फंड में 22 फीसदी की कटौती की गई है। जबकि बाल शिक्षा से जुड़े कोष में 25 फीसदी तक कम कर दिया गया है। आकड़ों पर गौर करें तो सामाजिक क्षेत्र के

कुल बजट आवंटन में भी काफी कटौती हो चुकी है। यह पिछले वित्त वर्ष के 16.3 फीसदी से घटकर 13.7 फीसदी हो चुका है। यह भी काफी अफसोसजनक है कि महिला और बाल विकास पर सरकार का विशेष ध्यान होने के बावजूद देश के कुल पौने अठारह लाख करोड़ रुपये के बजट का महज 0.01 फीसदी ही उनके ऊपर खर्च करने के लिए आवंटित है। उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय महिला आयोग को अधिक शक्तियां प्रदान करने वाले एनसीडब्ल्यू एक्ट में संशोधन संबंधी प्रस्ताव पिछले पांच माह से कैबिनेट में लंबित है। लेकिन अब तक इसे मंजूरी नहीं मिल सकी है। सूत्रों के मुताबिक एनसीडब्ल्यू एक्ट को कैबिनेट से हरी झंडी दिलाने के लिए महिला एवं बाल विकास मंत्री मेनका गांधी ने प्रधानमंत्री से विशेष गुहार लगाई थी। लेकिन इस पर निर्णय नहीं लिया जा सका है।

अमर उजाला 02.03.2015

निर्भया फंड की राशि खर्च नहीं हो पाई

नई दिल्ली (एसएनबी)। शनिवार को पेश आम बजट से यह उजागर हुआ कि दिल्ली पुलिस निर्भया फंड की राशि पिछले साल भी खर्च नहीं कर पाई। महिलाओं के प्रति होने वाले अपराध पर नकेल कसने के लिए केंद्र सरकार द्वारा लगभग दो साल पहले निर्भया फंड का गठन किया गया था। इस साल निर्भया फंड में 40 लाख रुपये की बढ़ोतरी भी की गई है। इसके बावजूद दिल्ली पुलिस आवंटित फंड का उपयोग नहीं कर पाई। हालांकि उसने दावा किया है कि मार्च पूरे होने में अभी एक माह शेष है और बची राशि महिलाओं की सुरक्षा को लेकर बनाई गई योजना में खर्च कर दी जाएगी।

में दिल्ली

बहरहाल केंद्र सरकार ने 2015-16 में दिल्ली पुलिस के लिए कुल 5372.88 करोड़ की राशि आवंटित की है। पिछले बजट में यह राशि 5036.47 करोड़ रुपये थी, बाद में संशोधित बजट में यह रकम 4865.30 करोड़ आवंटित की गई थी। राजधानी की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए इस बार बजट में दिल्ली पुलिस को 500 करोड़ रुपये पिछले बजट के मुकाबले अधिक देने का प्रावधान किया गया है। इस रकम से पुलिस सुरक्षा के लिए नई तकनीक और अत्याधुनिक हथियार के साथ ही पुलिसकर्मियों को बेहतर प्रशिक्षण देगी।

दिल्ली पुलिस को प्रस्तावित बजट में भवन निर्माण के लिए कुल 246.50 करोड़ रुपये आवंटित किया गया है। साल 2014-15 के बजट में ट्रेनिंग के लिए जहां 2.40 करोड़ की राशि आवंटित की गई थी वहीं 2015-16 में यह राशि बढ़ाकर 3

करोड़ कर दी गई है। आधुनिक तकनीक के लिए पिछले बजट में कुल 26 लाख रुपये का प्रावधान किया गया था, आगामी बजट में इस मद में राशि 50 करोड़ कर दी गई है। निर्भया फंड में महिलाओं की सुरक्षा और अधिक चुस्त-दुरुस्त किए जाने के लिए तीन करोड़ रुपये आवंटित किए गए थे, आगामी बजट में इस राशि को बढ़ाकर 40 लाख कर दिया गया है। दिल्ली पुलिस की घर की समस्या हल किए जाने के लिए 2014-15 के बजट में जहां 62.49 लाख रुपये का बजट आवंटित किया गया था जबकि 2015-16 के बजट में यह राशि बढ़ाकर 95 करोड़ कर दी गई है। 2015-16 के बजट में गैर-योजना मद में कुल 4979.48 करोड़ रुपये जबकि योजना मद में 390 करोड़ की राशि आवंटित की गई है। इनमें गैर योजना के सैलरी मद में कुल 3782.96 करोड़ आवंटित किया गया है।

राजधानी की सुरक्षा व्यवस्था हमेशा से ही दिल्ली पुलिस के लिए चुनौती रहा है और गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने भी दिल्ली पुलिस को अत्याधुनिक तकनीक एवं हथियार से लैस करने का वादा किया था। शनिवार को आम बजट में इसकी झलक देखने को मिली। केंद्रीय बजट में दिल्ली पुलिस को अत्याधुनिक हथियार खरीदने के लिए 11.70 करोड़ रुपये देने का प्रावधान किया गया है जबकि साल 2014-15 के बजट में यह राशि 5.50 करोड़ रुपये ही रखी गई थी। पुलिसकर्मियों की गड़बड़ों के लिए जहां वर्ष 2014-15 में 49.50 करोड़ रुपये दिए गए थे, वहीं इस बजट में इस राशि को बढ़ाकर 55 करोड़ रुपये किया गया है।

राष्ट्रीय सहारा 01.03.2015

दिल्ली पुलिस में महिलाओं की सुरक्षा में मील का पत्थर साबित होगी कोई भी कनेक्टिविटी घुमावदार नहीं होगी

नई दिल्ली। डीडीए व एनबीसीसी के तकनीकी अधिकारियों की मानें तो यह टीओडी आधारित स्मार्ट सिटी भविष्य में महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए मील का पत्थर साबित होगी। इस तकनीक से शहर भर में एक भी स्थान डार्क प्वाइंट (अंधेरी जगह) नहीं होगा। खास बात यह है कि एक भी परिसर चारदीवारी में नहीं होगी और न ही किसी परिसर के पीछे सैट बैंक या फिर फ्रंट में जगह छोड़ने की जरूरत पड़ेगी।

तकनीकी अधिकारियों का कहना है कि यह कोई नयी तकनीक नहीं है। देश में पहले भी इस तकनीक का इस्तेमाल किया जाता रहा है। हां लंबे समय बाद इस तकनीक के इस्तेमाल की दोबारा पहल की जा रही है।

डीडीए के तकनीकी अधिकारियों के दावे को आगे बढ़ाते हुए उपाध्यक्ष बलविन्दर कुमार ने कहा कि यह तकनीक लंबे समय (लॉग टर्म) में महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करेगी।

प्रोजेक्ट पर प्रकाश डालते हुए डीडीए की एक तकनीकी महिला अधिकारी ने शॉर्ट कट का जिक्र करते हुए कहा कि कोई भी रास्ता पांच मिनट से अधिक लंबा नहीं होगा।

कोई भी कनेक्टिविटी घुमावदार नहीं होगी। जिससे लोगों को गंतव्य तक पहुंचने में अधिक समय लगे। भवन नियमावली में सैट बैंक का भी कोई प्रावधान नहीं होगा। जिससे कहीं भी अंधेरा होने की आशंका रहे।

डीडीए उपाध्यक्ष ने महिलाओं के साथ ही बुजुर्गों की सुविधाओं पर भी जोर दिया। डीडीए बुजुर्गों के लिए करीब 2500 प्लैट बनाने की तैयारी में हैं। इसके साथ ही टीओडी के तहत तीन जगह और चिह्नित की गई हैं। अगले चरण में वहां भी टीओडी के तहत स्मार्ट सिटी का काम शुरू किया जाएगा।

राष्ट्रीय सहारा 05.05.2015

सार्वजनिक टायलेट की सुविधा सबसे अहम

मुख्य

अंजलि सिन्हा

तुं बई हाईकोर्ट ने पिछले दिनों एक जनहित याचिका की सुनवाई करते हुए महाराष्ट्र के सभी नगर निगमों को निर्देश दिया है कि वे 31 मार्च 2015 तक सार्वजनिक स्थलों तथा मुख्य मार्गों के किनारे महिला शौचालय बनवाने का काम पूरा करें। कोर्ट के मुताबिक निर्धारित समय के अन्दर शौचालयों के लिए नीति बनाने का निर्देश सबसे अहम है क्योंकि सिविक एजेंसियां इस काम के लिए हमी तो भरती हैं लेकिन काम पूरा नहीं करती हैं। मिलून सारयाजणी नामक महिला मुक्ति केन्द्रित पत्रिका द्वारा डाली गई इस पिटीशन को लेकर न्यायमूर्ति अभय ओक तथा अजय गडकरी की पीठ ने सुझाव दिया कि शौचालयों के प्रबंधन के लिए गैर-सरकारी संस्थाओं की भागीदारी सुनिश्चित होनी चाहिए। नवी मुंबई नगर निगम ने शौचालयों के रख-रखाव के लिए जब शुल्क बढ़ाने का सुझाव दिया तो कोर्ट ने जवाब दिया कि शुल्क उतना ही रखा जाए, जितना आम औरत भुगतान कर सके।

वास्तव में यह समझ से परे है कि आखिर नीति निर्माताओं का ध्यान महिलाओं से जुड़ी इस निहायत नैसर्गिक जरूरत की तरफ क्यों नहीं जाता है। उन्हें इस बात का एहसास कब होगा कि सार्वजनिक स्थलों पर टॉयलेट न होने से महिलाओं को कितनी परेशानी का सामना करना पड़ता है। कायदे से जिस जमाने में महिलाओं की सार्वजनिक दायरे में ज्यादा शिरकत नहीं थी, उस समय भी उनके लिए यह सुविधा होनी चाहिए थी लेकिन अब जब बड़ी संख्या में वह घर के बाहर होती हैं तो सार्वजनिक शौचालय का अभाव उनके लिए बहुत बड़ी समस्या नजर आता है।

तमाम दावों और प्रयासों के बाद आज भी सार्वजनिक दायरे में यह बुनियादी और अनिवार्य जरूरत पूरी नहीं की जा सकी है। इस मुद्दे पर वर्तमान सरकार से पहले भी गृह मंत्रालय ने पुलिस विभाग को पत्र लिख कर महिला पुलिस कर्मियों के लिए थानों में शौचालय की जरूरी व्यवस्था करने पर जोर दिया था। इस दौरान यह तथ्य भी सामने आया था कि जनवरी 2012 के सरकारी आंकड़ों के मुताबिक कुल 84,479 महिला पुलिस कर्मी हैं जो पुलिस बल का 5 फीसद बैठता है।

शौचालय की समस्या के दो पहलू हैं। निजी तथा सार्वजनिक दायरे में उनकी उपलब्धता। यह बात समझना

आवश्यक है कि घरों के अंदर शौचालय जहां किसी की भी व्यक्तिगत जिम्मेदारी होती है वहीं सार्वजनिक दायरे में- चाहे वह हाट-बाजार हो या किसी भी प्रकार का कार्यस्थल, इस सुविधा को उपलब्ध कराना सरकारी तथा नागरिक इकाइयों यानी नगरनिगम तथा पंचायतों की जिम्मेदारी बनती है।

यहां यह भी रेखांकित करना जरूरी है कि सार्वजनिक स्थलों पर इस सुविधा का अभाव महिलाओं की गतिशीलता को बाधित करता है इसलिए यदि हर घर में शौचालय की मुहिम पूरी भी हो जाती है तो भी महिलाओं के लिए सार्वजनिक स्थलों पर जन सुविधाओं के समुचित प्रबंधन बिना इसे पूरा नहीं माना जा सकता है। यही नहीं, सार्वजनिक स्थल पर इस जरूरत से निवृत्त होने के उपक्रम में उनकी निजता की रक्षा हर हाल में होनी ही चाहिए।



महिला शौचालय के मुद्दे की विडम्बना देखिए कि सार्वजनिक स्थलों पर जहां यह सुविधा उपलब्ध होती भी है वहां भी सुरक्षा के नाम पर इन पर अक्सर ताले ही जड़े मिलते हैं। कहा जाता है कि वहां असामाजिक तत्व घुसपैठ करते हुए महिलाओं के लिए खतरा पैदा कर देते हैं। ऐसी स्थिति में महिलाएं अमूमन इनके प्रयोग से बचती देखी जाती हैं। शहरों में कहीं भी इसे बहुत आसानी से देखा जा सकता है कि अक्सर महिलाओं के शौचालयों पर, यहां तक कि अस्पतालों में भी (दिल्ली के प्रतिष्ठित सरकारी अस्पताल अम्बेडकर अस्पताल में भी यही नजारा देखने को मिला) ताला लगा रहता है। दिल्ली में एमसीडी में पुरुष शौचालय खुला होता है लेकिन अक्सर महिला शौचालय बन्द मिलेगा या उपयोग करने लायक ही नहीं होगा। अक्सर निगम कर्मचारी उसे अपना झाड़ू आदि रखने के लिए स्टोर रूम के

रूप में इस्तेमाल करते हैं।

अध्ययन बताते हैं कि महिलाओं को निवृत्त होने में अधिक समय लगता है। इसी वजह से कई पश्चिमी देशों में इसके लिए विशेष नियम बनाये गये हैं। न्यूयॉर्क से लेकर अमेरिका के विभिन्न शहरों की नगरपालिकाओं ने नियम बनाया है कि नवनिर्मित किसी भी इमारत में पुरुष तथा स्त्रियों के लिये बनने वाले टायलेटों का अनुपात 1:2 रहेगा। न्यूयॉर्क के कांफेरिशन ने शौचालय के मसले पर बाकायदा रेस्ट्रूम इक्विटी बिल पास किया, जिसमें नियम बनाया गया कि सार्वजनिक स्थानों पर पुरुषों व महिलाओं के लिए बनने वाले शौचालयों में 1:2 का अनुपात होगा। पुरुषों के लिए अगर एक शौचालय बनेगा तो महिलाओं के लिए दो बनेंगे। कौन्सिल ने पेश अध्ययन पर गंभीरता से विचार किया कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं को निवृत्त होने में अधिक समय लगता है। दिलचस्प है कि अपर्याप्त टायलेट सुविधाओं को यौन उत्पीड़न का प्रकार मानने के बारे में दायर एक जनहित याचिका के बाद यह मसला चर्चा में आया था। लेकिन जहां तक अपने देश की बात है तो यहां यह अनुपात 1:1 होने में भी कई दशक बीत जाएंगे।

सार्वजनिक दायरे में शौचालयों की अनुपलब्धता की छाया स्कूलों पर भी दिखती है। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन (नीपा) के एक अध्ययन के मुताबिक देशभर में सिर्फ 32 प्रतिशत स्कूलों में ही लड़कियों के लिए अलग शौचालय की व्यवस्था है जबकि ग्रामीण इलाकों में यह महज 29.41 प्रतिशत ही है। स्कूलों में 40 बच्चों पर एक शौचालय का नियम है और बालिकाओं के लिए 25 पर एक शौचालय का सुझाव है। लेकिन यह सब कागज पर ही दिखता है। दिल्ली के अधिकतर सरकारी स्कूलों में एक या दो शौचालय में भी शायद ही कोई साफ-सुथरा तथा अच्छी हालत में हो।

बड़ी होती बालिकाएं मासिक धर्म के समय शौचालय या वहां पानी का इंतजाम न रहने के कारण स्कूल से अनुपस्थित होने को मजबूर होती हैं। स्वास्थ्य की मामूली जानकारी रखने वाला भी बता सकता है कि गंदगी के कारण स्त्रियां बहुधा मूत्रनली के संक्रमण का शिकार हो जाती हैं। दिल्ली की पुनर्वासि बस्तियों में किशोरियों के साथ की गयी कार्यशालाओं के दौरान यही सुनने को मिला कि किस तरह उनकी कमी बच्चियों की शिक्षा को प्रभावित कर रही है। सवाल है कि सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं की इस जरूरत पर आखिर नियोजनकर्ताओं का ध्यान क्यों नहीं जाता? क्या उन्होंने माना होगा कि वे सार्वजनिक दायरे में प्रवेश की हकदार नहीं हैं? बहरहाल, अब जब महिलाएं हर क्षेत्र में उपस्थित हैं तो यह गलती सुधार लेनी चाहिए। स्वच्छ शौचालय की सुविधा हर व्यक्ति का बुनियादी अधिकार है।

राष्ट्रीय सहारा 10.01.2015

दिल्ली में कामकाजी महिलाओं पर किया गया सर्वे

15% ऑफिस में महिला टॉयलेट नहीं

अमर उजाला ब्यूरो

नई दिल्ली। राजधानी के 85 फीसदी ऑफिसों में ही महिलाओं के लिए अलग टॉयलेट हैं। जबकि 15 फीसदी कार्यालयों में अलग से टॉयलेट की सुविधा नहीं है। दिल्ली की 61 फीसदी महिलाएं 8 से 10 घंटे ऑफिस में कामकाज करती हैं। जबकि ऑफिस जाने और आने में करीब एक से डेढ़ घंटे पब्लिक ट्रांसपोर्ट का सहारा लेती हैं। महिलाओं को कामकाज के लिए घर से औसतन 30 किलोमीटर दूर तक सफर करना पड़ता है। तमाम दिक्कतों के बावजूद 68 फीसदी महिलाएं अपने ऑफिस व परिवार के काम से बेहद संतुष्ट हैं।

खास बात यह है कि लगभग 57 फीसदी महिलाएं अपने वेतन में से मात्र 10 फीसदी ही अपनी चिकित्सा पर खर्च करती हैं। वहीं महज 50 फीसदी ने ही अपने लिए मेडिकल इंश्योरेंस की सुविधा ले रखी है। दिल्ली की रफ्तार में



महिलाएं परिवार को चलाने के लिए घर से बाहर कदम रख चुकी हैं, लेकिन सुरक्षा के अलावा अन्य दिक्कतें भी उन्हें झेलने पड़ती हैं। कुछ इन्हीं परेशानियों को जानने के लिए पीएचडी चैंबर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री ने जनवरी और फरवरी में दिल्ली के विभिन्न इलाकों में हर आयु वर्ग की लगभग दो हजार से अधिक महिलाओं पर सर्वे के आधार पर रिपोर्ट तैयार की है।

पीएचडी चैंबर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री के प्रेजिडेंट अलोक बी. श्रीराम के मुताबिक, सर्वे में करीब 59 फीसदी महिलाओं ने माना कि वे बीमारी की हालत में ही छुट्टी

महत्वपूर्ण तथ्य

31% महिलाओं को कामकाज के दौरान डिस्पेंसरी और लेडी डॉक्टर की सुविधा मिलती है।

80% महिलाओं ने माना कि ऑफिस से आने के बाद दो से चार घंटे घर में भी काम करती हैं।

47% महिलाएं सर्दी, जुकाम, खांसी और बुखार के कारण ही अपना ऑफिस छोड़ती हैं।

23% को सिरदर्द और शरीर में सबसे बड़ी दिक्कत है।

39% महिलाएं ही प्रसव के बाद 3-6 महीने की छुट्टी ले सकीं।

26% के ऑफिस में ऐसी विशेष छुट्टी का प्रावधान ही नहीं।

लेती हैं। कभी घूमने-फिरने के लिए छुट्टी नहीं ली। जबकि 64 फीसदी महिलाओं ने माना कि वे बीमारी में सरकारी की बजाय निजी अस्पताल में इलाज करने को तवज्जो देती हैं। **पब्लिक ट्रांसपोर्ट के धक्के रोज पड़ते सहने:** पीएचडी चैंबर ऑफ कॉमर्स के मुख्य अर्थशास्त्री एसपी शर्मा के मुताबिक, सर्वे में एक चौकाने वाला तथ्य सामने आया है कि महिलाएं परिवार को चलाने के

लिए घर से बाहर तो निकल रही हैं लेकिन उसके लिए उन्हें ऑफिस तक पहुंचने में बड़ी दिक्कतों को सामना करना पड़ता है।

लगभग 61 फीसदी महिलाओं ने माना कि ऑफिस में 8 से 10 घंटे काम करने के अलावा वे हर दिन लगभग 30 किलोमीटर तक सुबह और शाम एक से डेढ़ घंटे का समय बसों, मेट्रो या ग्रामीण सेवा में गुजारती हैं।

अमर उजाला 10.03.2015

स्वच्छता को लेकर जागरूकता

बच्ची की जिद ... और पूरे गांव में बन गए टॉयलेट

जेवर गिरवी रख बनवाए टॉयलेट

बलजीत सिंह ठाकुर | सीहोर

गांवों में स्वच्छता को लेकर ग्रामीण जागरूक हो रहे हैं। कोई जेवर गिरवी रखकर टॉयलेट बनवा रहा है तो कहीं सात साल की बच्ची की जिद ने पूरे गांव में टॉयलेट बनवा दिए। यही कारण है कि जिले में एक साल में 20,543 टॉयलेट बन गए।

ग्राम डोंडी में एक दिन रात्रि चौपाल के दौरान समर्थन संस्था की संतोषी तिवारी ग्रामीणों को स्वच्छता के लिए प्रेरित कर रही थीं। इस मौके पर 7वीं की छात्रा सुषमा भी थी। घर जाकर सुषमा ने मां से टॉयलेट बनवाने की जिद की। उसकी विधवा मां रेशम बाई मीणा के पास पैसे नहीं थे। उन्होंने सरपंच लखन मेवाड़ा से बात की। सरपंच ने उधार पैसे दिए। मां-बेटी ने खुद गड्डा खोदा। इससे प्रेरणा लेकर गांव के दूसरे लोगों ने भी टॉयलेट बनवाए। आज इस गांव के सभी 202 घरों में टॉयलेट हैं। जहांगीरपुरा गांव में ओम लोधी ने पत्नी के जेवर गिरवी रखकर 10 हजार रुपये कर्ज लेकर टॉयलेट बनवाया। बाद में पंचायत से सरकारी योजना के 8 हजार रुपये भी मिले। रायपुरा नयाखेड़ा गांव के रतन सिंह पत्नी अचरज बाई नेत्रहीन हैं। उन्हें बाहर जाने में काफी परेशानी होती थी। बेटे नारायण सिंह मेवाड़ा ने भी कर्ज लेकर टॉयलेट बनवाया।

पहले निर्मल भारत अभियान के तहत 4600 रु. और मनरेगा से 5400 रु. प्रति टॉयलेट मिलते थे। दो अक्टूबर से इसे स्वच्छ भारत मिशन का नाम दिया है। अब 12 हजार रुपये मिलेंगे।

दैनिक भास्कर 02.02.2015



विश्लेषण

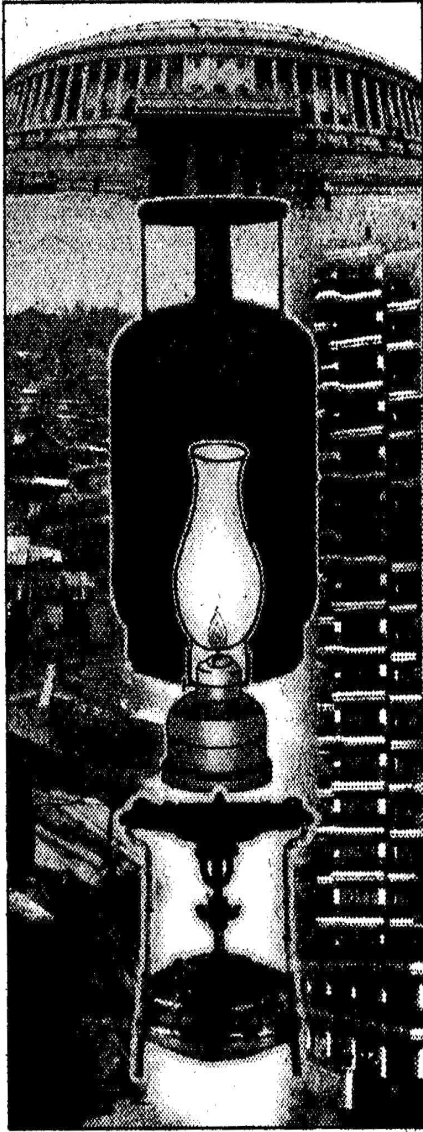
जयंतीलाल भंडारी

राजीव गांधी नए बजट के बाद सब्सिडी के मूल्य और उसके दुरुपयोग में कमी आने की संभावना उभरकर दिखाई दे रही है। पहली बार वित्त वर्ष 2015-16 के बजट में सरकार ने खाद्य, उर्वरक और पेट्रोलियम पर दी जाने वाली सब्सिडी में 10 फीसद की कटौती कर दी है, लेकिन सब्सिडी के बेहतर उपयोग का प्रश्न देश के समक्ष खड़ा हुआ है। गौरतलब है कि पिछले वित्त वर्ष 2014-15 में यह सब्सिडी 2 लाख 53 हजार 913 करोड़ रुपए थी। लेकिन यह अब 2 लाख 27 हजार 387 करोड़ रुपए रहेगी। प्रमुखतया पेट्रोलियम सब्सिडी को पिछले वित्त वर्ष के 60 हजार 270 करोड़ रुपए की तुलना में आधा यानी 30 हजार करोड़ किए जाने से यह स्थिति बनी है। सरकार ने नए बजट में खाद्य सब्सिडी 1 लाख 24 हजार 419 करोड़ रुपए रखी है। कुल खाद्य सब्सिडी में से 65 हजार करोड़ रुपए खाद्य सुरक्षा कानून के लिए रखे गए हैं। सब्सिडी चालू वित्त वर्ष में जीडीपी के 2.1 फीसद की तुलना में अगले वित्तवर्ष 2015-16 में 1.7 फीसद पर रहेगी। सरकार का कहना है कि सब्सिडी के बेहतर लक्ष्य के जरिए एक तरफ वास्तविक जरूरतमंदों को संरक्षण मिलेगा, वहीं दूसरी ओर सक्षम लोगों को सब्सिडी से दूर रखा जाएगा। परिणामस्वरूप आर्थिक विकास की रफ्तार बढ़ेगी और अर्थव्यवस्था मजबूत होगी।

अर्थव्यवस्था की खस्ता हालत के लिए मोटे तौर पर बढ़ती हुई सब्सिडी से बढ़ता हुआ राजकोषीय घाटा जिम्मेदार कहा जा सकता है। आजादी के बाद से ही देश में बिना किसी भेदभाव के सभी के लिए सब्सिडी देने का इतिहास रहा है। मसलन, घरेलू गैस सिलेंडर, सिंचाई के पानी, बिजली का शुल्क, रेल किराया, डाक का

खर्च, स्वास्थ्य सुविधाएं और शिक्षा, इन सभी पर लागत से कम पैसा लिया जाता रहा है। यदि हम वर्ष 2011 से 2013 के बीच के आंकड़ों पर नजर डालें तो पाते हैं कि पेट्रोलियम उत्पादों पर भारी सब्सिडी की वजह से राजकोषीय घाटा बढ़कर जीडीपी के 5.2 फीसद के बराबर जा पहुंचा था। इतना ही नहीं, पेट्रोलियम कंपनियों की सब्सिडी का स्तर जीडीपी के दो फीसद के

की प्रमुख हिस्सेदारी है। अमेरिका और यूरोपीय आर्थिक समुदाय के पास ऐसी योजनाएं हैं जो खेती के लिए सब्सिडी प्रदान करती हैं। अधिकांश विकसित अर्थव्यवस्थाएं अपने खास उद्योगों और निर्यात के मोर्चे पर मदद देती हैं। इतना ही नहीं, सभी विकसित देशों के पास एक मजबूत सामाजिक सुरक्षा योजना है जिसकी छतरी में कमजोर वर्ग के लोगों की मदद की जाती



● गरीबों को सस्ती एलपीजी गैस 'से प्रति व्यक्ति महज 10 रुपए का फायदा मिलता है, वहीं अमीरों को यह करीब 80 रुपए प्रति व्यक्ति का फायदा पहुंचाती है। इसी तरह सस्ते केरोसिन का करीब 46 फीसद ही गरीब परिवार हासिल कर पाते हैं। सब्सिडी का ज्यादातर हिस्सा वास्तव में गरीबों के पास नहीं पहुंचता

● सरकार को अब सब्सिडी सुधारों की डगर पर आगे बढ़ते समय इसके बेहतर लक्ष्य को ध्यान में रखकर फूंक-फूंककर कदम उठाने होंगे तथा सब्सिडी के परिप्रेक्ष्य में आर्थिक विकास तथा सामाजिक खुशहाली के बीच संतुलन कायम करते हुए आगे बढ़ना होगा

बराबर हो गया था।

हालांकि ऐसी बात नहीं है कि सब्सिडी केवल भारत में ही दी जाती है। दुनियाभर की अर्थव्यवस्थाएं किसी न किसी तरह सब्सिडी से जुड़ी हुई हैं। अमेरिका, ब्रिटेन और जर्मनी जैसी भरपूर पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में भी सब्सिडी

है। स्थिति यह है कि विकसित देशों में भी वस्तुओं एवं सेवाओं के मामले में पूरी तरह बाजार आधारित मूल्य निर्धारण ढांचा दिखाई नहीं देता है। वहीं भारी सब्सिडी, व्यापार घाटे और राजकोषीय घाटे के कारण दक्षिणी यूरोप सहित कई देशों की सरकारें मुश्किलों का सामना

कर रही हैं। दुनियाभर में सरकारी खर्च में कटौती की कोशिशें हो रही हैं, लेकिन लोग मिली हुई सुविधाएं छोड़ने को तैयार नहीं हैं। परिणामस्वरूप एक ओर जनअसंतोष बढ़ रहा है, वहीं दूसरी ओर अर्थव्यवस्था चरमरा रही है।

निसंदेह हमारे देश में भी राजकोषीय घाटे एवं सब्सिडी की स्थिति चिंताजनक है। ऐसे में पिछले कुछ समय से सरकार को आर्थिक मोर्चे पर नीतियों में तब्दीली हेतु कई महत्वपूर्ण समितियों की रिपोर्टें प्राप्त हुईं। वित्तीय सुदृढीकरण पर 28 सितम्बर, 2012 को प्रकाशित विजय केलकर समिति की रिपोर्ट में कहा गया कि सब्सिडी और राजकोषीय घाटे में कमी लाने के लिए ईंधन और खाद्य सब्सिडी हमेशा जारी नहीं रखी जा सकती। इनका भारी दुरुपयोग हो रहा है और ये सब्सिडियां जरूरतमंद लोगों तक नहीं पहुंच पा रही हैं। प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद ने अप्रैल 2013 में कहा कि पेट्रोलियम सब्सिडी की खुली प्रकृति की वजह से सब्सिडी का बोझ बहुत अधिक बढ़ा है। यूरिया में उच्च सब्सिडी ने उर्वरकों के प्रयोग में असंतुलन पैदा किया है। इसी तरह मुफ्त सिंचाई के पानी और पंप के लिए सस्ती बिजली ने भी संसाधनों के दुरुपयोग को बढ़ावा दिया। सब्सिडी दुरुपयोग रोकने के लिए नंदन नीलकेणी कमेटी ने स्पष्ट रूप से कहा कि जिन लोगों को सब्सिडी की जरूरत है, उन्हें इसे नकद सहायता (कैश ट्रांसफर) के रूप में दिया जाना चाहिए।

गौरतलब है कि 27 फरवरी, 2015 को संसद में पेश आर्थिक समीक्षा में सब्सिडी के विषय पर पहली बार समग्र दृष्टि डाली गई है और इसके तहत आवंटन के बारे में विस्तार से जानकारी दी गई है। साथ ही लाभार्थियों की अनुमानित संख्या व गड़बड़ी के बारे में बताया गया है। समीक्षा में कहा गया है कि 2014-15 में केंद्र सरकार ने करीब 3,78,000 करोड़ रुपए या जीडीपी के करीब 4.24 फीसद की सब्सिडी प्रदान की। समीक्षा में कहा गया है कि बड़े उपभोक्ता कुल बिजली सब्सिडी का करीब 37 फीसद लाभ लेते हैं, जबकि कमजोर उपभोक्ता कुल सब्सिडी का महज 10 फीसद हासिल कर

पाते हैं। गरीबों को सस्ती एलपीजी गैस से प्रति व्यक्ति महज 10 रुपए का फायदा मिलता है, वहीं अमीरों को यह करीब 80 रुपए प्रति व्यक्ति का फायदा पहुंचाती है। इसी तरह सस्ते केरोसिन का करीब 46 फीसद ही गरीब परिवार हासिल कर पाते हैं। सब्सिडी का ज्यादातर हिस्सा वास्तव में गरीबों के पास नहीं पहुंचता। समीक्षा में कहा गया कि प्रथम दृष्टया कीमत में सब्सिडी गरीबों के जीवनस्तर पर प्रभावी असर नहीं डाल पा रही है, हालांकि महंगाई व कीमतों में उतार-चढ़ाव से निपटने में इसने गरीब परिवारों की मदद की है।

आर्थिक प्रबंधकों के लिए सब्सिडी का मसला कभी आसान नहीं होता। उन्हें हमेशा अच्छी सब्सिडी की पहचान करनी होती है, जबकि बुरी सब्सिडी से बचना होता है। खाद्य सब्सिडी जरूरतमंदों तक पहुंचाने के लिए प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (डीबीटी) योजना को लागू करने से सरकार को 2,50,000 करोड़ रुपए की बचत हो सकती है। इसीलिए सरकार ने खाद्य सब्सिडी को जरूरतमंदों तक पहुंचाने के लिए प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (डीबीटी) योजना को लागू किया है। इसके तहत हकदार लाभार्थी के बैंक खाते में राशि नकदी के रूप में पहुंचाई जाएगी। जनधन योजना, आधार और मोबाइल तकनीक (जेएएम) के मेल से लाभार्थियों की बेहतर तरीके से पहचान की जा सकती है और जरूरतमंद लोगों को समर्थन दिया जा सकता है। जेएएम के अलावा मोबाइल मनी प्लेटफॉर्म व डाकघर का इस्तेमाल सब्सिडी के सीधे हस्तांतरण में किया जा सकता है। अगर जेएएम नंबर का आपस में जुड़ाव हो सके और सभी सब्सिडियां मिलाकर एक कर दी जाएं और इन्हें मासिक हस्तांतरण में तब्दील किया जाए तो जरूरतमंदों को वास्तविक लाभ मिलना मुमकिन हो सकता है। सरकार को अब सब्सिडी सुधारों की डगर पर आगे बढ़ते समय सब्सिडी के बेहतर लक्ष्य को ध्यान में रखकर फूंक-फूंककर कदम उठाने होंगे तथा सब्सिडी के परिप्रेक्ष्य में आर्थिक विकास तथा सामाजिक खुशहाली के बीच संतुलन कायम करते हुए आगे बढ़ना होगा। (आलेख में व्यक्त विचार लेखक के निजी हैं)

राष्ट्रीय सहारा 23.03.2015

खुद प्रिंट करें ई राशन कार्ड

अरविंद केजरीवाल आज करेंगे सेवा की शुरुआत

अमर उजाला ब्यूरो

नई दिल्ली। शुक्रवार को ई राशन कार्ड जारी करने वाला दिल्ली पहला राज्य बन जाएगा। कोई भी आवेदक जिसका आवेदन स्वीकार कर लिया गया, वह रेल और हवाई ई टिकट की तरह कहीं भी ई राशन कार्ड प्रिंट कर सकेगा। वहीं, सरकार के स्मार्ट कार्ड बनाने और उसे डाक से भेजने के पैसे भी बचेंगे। मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल शुक्रवार को दिल्ली सचिवालय में इस योजना का शुभारंभ करेंगे।

खाद्य एवं आपूर्ति विभाग के प्रोजेक्ट से जुड़े अधिकारियों का कहना है कि अभी राशन कार्ड स्मार्ट कार्ड की तर्ज पर बनता है। जिसे स्पीड पोस्ट से भेजा जाता है। बड़ी संख्या में उन राशन कार्ड के

कटवाने पर नए स्मार्ट राशन कार्ड बनाने की परेशानी से उपभोक्ता बच सकेंगे।

राजधानी के 16.98 लाख परिवारों का राशन कार्ड बन चुका है जिसमें 60.21 लाख सदस्यों के नाम शामिल हैं। नई योजना के शुरू होने पर जिन्हें राशन कार्ड नहीं मिला है, वह परिवार के मुखिया के



आधार नंबर से ई राशन कार्ड डाउनलोड करके प्रिंट आउट ले सकेंगे। हालांकि प्रिंट आउट के लिए वन-टाइम पासवर्ड (ओटीपी) जनरेट करना पड़ेगा। जो रजिस्टर्ड मोबाइल नंबर पर आएगा और उसे फिर ऑनलाइन अंकित करके वेरिफिकेशन पूरा करना होगा। विभाग की वेबसाइट <http://nfs.delhi.gov.in> पर जाकर सिटीजन कॉर्नर में ई राशन कार्ड डाउनलोड का विकल्प दिया गया है।

अमर उजाला 27.03.2015

राशन वितरण प्रणाली चरमराने के कगार पर

संजय के झा/ एसएनबी

नई दिल्ली। राजधानी के हजारों उचित दर दुकानदारों ने सरकार से राशन प्राप्त करने के लिए अप्रैल महीने की अग्रिम राशि जमा करने से इनकार कर दिया है। अग्रिम राशि जमा कराने की अंतिम तिथि 10 मार्च थी। राजधानी में दिल्ली सरकार से अधिकृत 2400 उचित दर दुकानों द्वारा गरीबी रेखा के नीचे के लाखों लोगों को रियायती दरों पर चावल व गेहूं उपलब्ध कराया जाता है लेकिन यह व्यवस्था अब चरमराने लगी है। इन दुकानदारों द्वारा हर महीने तीन लाख क्विंटल चावल व गेहूं का वितरण किया जाता है। अब पूरी वितरण व्यवस्था अप्रैल महीने से ठप होने के कगार पर पहुंच गई है।

इस वितरण के एवज में 2400 उचित दर दुकानदारों को सरकार द्वारा हर महीने 2 करोड़ रुपए मार्जिन मनी या कमीशन देना पड़ता है लेकिन दिल्ली सरकार के खाद्य व आपूर्ति विभाग ने यह कमीशन उन्हें 11 महीने से नहीं अदा किया है। यह विवाद का प्रमुख विषय है। अब दुकानदार कमीशन बढ़ाने की भी मांग कर रहे हैं। इन दुकानदारों को 1 अप्रैल 2014 से फरवरी 2015 तक का कोई कमीशन का भुगतान ही नहीं किया है। इसलिए अब दिल्ली राशन डीलर्स संघ के अध्यक्ष शिव कुमार गर्ग का कहना है कि उन्हें मासिक वेतन देकर सरकार उनसे पूरे महीने काम कराए, अन्यथा कमीशन देने पर दुकानदार मात्र 15 दिन ही काम करेंगे।

नियमानुसार अप्रैल महीने का राशन प्राप्त करने के लिए सभी 2400 उचित दर दुकानदारों

■ दो हजार से ज्यादा उचित दर दुकानदारों ने नहीं जमा कराए अप्रैल के लिए अग्रिम ड्राफ्ट

■ हर महीने लगभग तीन लाख क्विंटल गेहूं व चावल वितरित होता है इन दुकानों द्वारा

■ दुकानदारों को पिछले 11 महीने से नहीं मिला कमीशन

■ कमीशन बढ़ाने की भी मांग, सरकार के दबाव में नहीं आ रहे दुकानदार



को 7 मार्च तक ही खाद्य एवं आपूर्ति विभाग के कार्यालय में अग्रिम राशि बैंक ड्राफ्ट द्वारा जमा कराना पड़ता है। लेकिन 7 मार्च तक मात्र 300 दुकानदारों ने खाद्य एवं आपूर्ति विभाग में बैंक ड्राफ्ट जमा कराया। विभागीय अधिकारी परेशानी को भांप गए तथा बैंक ड्राफ्ट जमा कराने की तिथि बढ़ाकर 10 मार्च कर दी गई फिर भी मात्र 350 दुकानदारों ने अपने ड्राफ्ट जमा कराए हैं। यानि 2050 दुकानदारों ने विभाग से चावल, गेहूं आदि प्राप्त करने के लिए कोई धन राशि जमा नहीं कराई है जिससे सरकार द्वारा गरीबों को रियायती दरों पर चावल व गेहूं आदि उपलब्ध कराने की व्यवस्था अगले महीने से बंद होने के कगार पर है।

दिल्ली सरकारी राशन डीलर्स संघ के अध्यक्ष शिव कुमार गर्ग ने बताया कि पिछले महीने 32 दुकानदारों द्वारा अग्रिम ड्राफ्ट नहीं जमा कराने पर उनके लाइसेंस सस्पेंड कर दिए गए थे। विभाग दुकानदारों पर दबाव बना रहा है लेकिन इस बार वे दबाव में नहीं आ रहे हैं। उन्होंने कहा कि दिल्ली सरकार उनसे बंधुआ मजदूर की तरह काम कराना चाहती है। दिल्ली में खाद्य सुरक्षा कानून 1 सितम्बर 2013 से लागू हुआ है और इसके बाद से अबतक सरकार ने राशन डीलर्स की आजीविका को

सुरक्षित रखने का कोई प्रबन्ध नहीं किया है।

राष्ट्रीय सहारा 13.03.2015

इंटरनेट की आजादी का फैसला

• संदर्भ- आईटी एक्ट की धारा 66ए पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले के प्रमुख अंश

धारा सिर्फ उस माध्यम का उल्लेख करती है, जिसके जरिये यह सूचना वितरित की जा सकती है। इसलिए याचिकाकर्ताओं का यह कहना सही है कि धारा 66ए से लोगों का जानने का अधिकार सीधे प्रभावित होता है।

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि 66ए में उपयोग में लाए एक्सप्रेसनस पूरी तरह खुले और अपरिभाषित हैं। धारा 66ए में उपयोग में लाए गए एक्सप्रेसनस परिभाषित नहीं हैं। यहां तक कि 'आपराधिक डराना-धमकाना' भी परिभाषित नहीं है।

सॉलिसिटर जनरल का यह आश्वासन नहीं माना जा सकता कि इसे तार्किक ढंग से लागू किया जाएगा। सरकारें आएंगी और सरकारें जाएंगी पर धारा 66ए हमेशा लागू रहेगी। मौजूदा सरकार का आश्वासन चाहे पूरी आस्था से लागू किया जाए पर यह आगे आने वाली सरकार पर बंधनकारी नहीं होता।

भारत में इंटरनेट की आजादी पर अपने पहले फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने आईटी अधिनियम की धारा 66ए को खारिज कर दिया, जिसमें आपत्तिजनक पोस्ट करने वाले को गिरफ्तार करने का अधिकार दिया गया था। कोर्ट ने कई पृष्ठों में दिए विस्तृत फैसले में कहा कि अभिव्यक्ति की आजादी और उस पर लगी तर्कपूर्ण पाबंदियों का संतुलन यह धारा बिगाड़ती है। पहिए फैसले के प्रमुख अंश :

संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर रिट याचिकाओं में कई महत्वपूर्ण और दूरगामी प्रश्न उठाए गए हैं। इनका प्राथमिक संबंध संविधान के अनुच्छेद 19 (1)(ए) के तहत अभिव्यक्ति की आजादी की गारंटी से है। इन याचिकाओं में तात्कालिक चिंता का विषय सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 की धारा 66ए है। यह धारा मूल अधिनियम में नहीं थी बल्कि 2009 में संशोधन अधिनियम के माध्यम से जोड़ी गई।

याचिकाकर्ताओं का कहना है कि धारा 66ए का यह आधार गलत है कि सूचना प्रौद्योगिकी के कारण नए प्रकार के अपराध सामने आए हैं। उनका कहना है कि धारा 66 बी से 67 सी और भारतीय दंड विधान की विभिन्न धाराएं इस प्रकार के अपराधों से निपटने में सक्षम हैं।

याचिकाकर्ताओं का यह भी कहना है कि अनुच्छेद 14 और 21 के तहत मिले अधिकारों का उल्लंघन होता है, क्योंकि इंटरनेट का इस्तेमाल करने वालों और लिखित या बोले हुए शब्दों का इस्तेमाल कर संचार के अन्य साधनों का इस्तेमाल करने वालों में कोई सुस्पष्ट अंतर नहीं किया गया है। किसी व्यक्ति को इसलिए सजा देना कि वह संचार का कोई खास माध्यम अपनाता है, यह अपने आप में भेदभावजनक है।

फिर एस. खूशबू बनाम कन्नैयामल एवं अन्य (2010) के मामले में इस अदालत ने कहा है कि हालांकि, बोलने की व अभिव्यक्ति की आजादी निरपेक्ष नहीं है, लेकिन फिर भी यह आवश्यक है, क्योंकि हमें अलोकप्रिय विचारों को भी सहन करना चाहिए। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के दायरे को समझने के लिए तीन अवधारणाएं हैं। पहला, विचार-विमर्श, दूसरा अपने पक्ष का समर्थन और तीसरा उकसावा। विचार-विमर्श और अपने पक्ष का समर्थन या हिमायत करना कितना ही अलोकप्रिय हो पर यह अनुच्छेद 19 (1) के केंद्र में है। जब ये दोनों उकसावे के स्तर पर पहुंचते हैं तब अनुच्छेद 19 (2) शुरू होता है।

धारा 66ए को इस आधार पर चुनौती दी गई है कि इसका दायरा बहुत व्यापक है। इंटरनेट पर वितरित सारी सूचना इसकी पहुंच के भीतर है। यह गौर करना उपयोगी होगा कि आईटी एक्ट 2000 की धारा 2 (5) के तहत डाटा, मैसेज, टेक्स्ट, इमेज, ध्वनि, बोले गए शब्द, कोड, कंप्यूटर प्रोग्राम, सॉफ्टवेयर और डाटाबेस या माइक्रो फिल्म को सूचना माना गया है।

दो बातें ध्यान में आएंगी। पहली यह कि परिभाषा सर्वसमावेशी है और दूसरा, यह नहीं बताया गया है कि सूचना की सामग्री क्या हो सकती है। तथ्य तो यह है कि यह सिर्फ उस माध्यम का उल्लेख करती है, जिसके जरिये यह सूचना वितरित की जा सकती है। इसलिए याचिकाकर्ताओं का यह कहना सही है कि धारा 66ए से लोगों का जानने का अधिकार सीधे प्रभावित होता है।

धारा को एक चुनौती इस आधार पर भी दी गई है कि इसमें जो अपराध बताया गया है उनका अनुच्छेद 19 (2) में दिए गए आठ विषयों से कोई निकट संबंध नहीं है। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि सरकार की ओर दलील दी गई है कि यह इस धारा का लोक व्यवस्था, मानहानि, उकसावा, शिष्टता या नैतिकता के आधार पर समर्थन किया जा सकता है।

इसके पहले की हम इनकी बात करें हमें यह समझना होगा 'के हित में' (इन द इंटरेस्ट ऑफ) से क्या तात्पर्य है। फतेहगढ़ जेल अधीक्षक बनाम राम मनोहर लोहिया (1960) के मामले में अदालत ने कहा था:

आईटी एक्ट की इस विवादास्पद धारा को रद्द कर सर्वोच्च अदालत ने विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को नया आयाम दिया है, पर ध्यान रहे कि यह स्वतंत्रता असीमित नहीं है।

धारा 66 ए की विदाई

सर्वोच्च न्यायालय ने सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम (आईटी एक्ट) की विवादास्पद धारा 66 ए को रद्द कर संविधान के अनुच्छेद 19 के तहत प्रदत्त विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को ही नया आयाम दिया है। दरअसल इंटरनेट के बढ़ते दायरे के साथ ही उसके जरिये प्रसारित होने वाली अथाह सामग्री को नियंत्रित करने के लिए कानून की जरूरत महसूस की गई थी, जिसके फलस्वरूप आईटी एक्ट अस्तित्व में आया। मगर इसकी धारा 66 ए को ठीक से परिभाषित नहीं किए जाने के कारण सरकारों और पुलिस को सोशल नेटवर्किंग या अन्य साइट्स पर कथित आपत्तिजनक सामग्री प्रसारित करने पर संबंधित व्यक्ति के खिलाफ कार्रवाई का मनमाना अधिकार मिल गया था। यहां तक कि ऐसी सामग्री



को सिर्फ 'लाइक' करने वालों तक को जेल की हवा खानी पड़ी है! वास्तव में इंटरनेट ने अभिव्यक्ति का नया मंच प्रदान करने के साथ ही राजनीतिक जनमत बनाने का काम भी किया है। देश में आज 30 करोड़ से अधिक लोग इंटरनेट का उपयोग कर रहे हैं, जिनमें युवाओं की संख्या अधिक है। इस ताकत को सोशल

नेटवर्किंग साइट्स का बखूबी इस्तेमाल करने वाले प्रधानमंत्री मोदी से बेहतर भला कौन जान सकता है! यह भी सच है कि जिन मामलों की बजह से धारा 66 ए पर सवाल उठे, वे राजनीति से ही कहीं अधिक प्रेरित थे। फिर वह शिवसेना प्रमुख बाल ठाकरे की अंत्येष्टि को लेकर की गई पोस्ट हो या कार्टून शेयर करने का

मामला। शीर्ष अदालत ने 66 ए को लोगों के जानने के बुनियादी अधिकार का हनन बताया है। उसने आईटी एक्ट की धारा 79 (3) (बी) को भी नए ढंग से परिभाषित करने की बात की है, जिससे इंटरनेट और सोशल नेटवर्किंग साइट प्रदाता कंपनियों को राहत मिलेगी, क्योंकि इसकी आड़ में सरकारें उन पर नकेल कसती रही हैं। शीर्ष अदालत का फैसला सरकारों और राजनीतिक वर्ग के लिए ही नहीं, बल्कि नैतिकता के स्वयंभू झंडाबरदारों के लिए भी कड़ा संदेश है। लेकिन अभिव्यक्ति की आजादी का यह मतलब नहीं है कि दूसरों की भावनाओं को आहत किया जाए। इसके साथ ही यह समझने की भी जरूरत है कि विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता असीमित नहीं है, बल्कि वह कानून और संविधान के दायरे में है।

अमर उजाला 25.03.2015

देखी सुनी - मुख्य हिंदी समाचार पत्रों में छपने वाले महिला मुद्दों से सम्बन्धित खबरों व लेखों का त्रैमासिक संकलन है। संकलित लेखों में व्यस्त विचार लेखकों के निजी विचार हैं, ज़रूरी नहीं यह हमारी संस्थागत सोच व क्रियांचयन को दर्शाते हैं।

Bread for the World, Misereor के सहयोग से प्रकाशित

JAGORI

निशुल्क प्रतियों के लिए संपर्क करें-
जागोरी, बी-114, शिवालीक, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017,
फोन: 011-26691219, 26691220
email: resource@jagori.org/jagori@jagori.org, www.jagori.org